THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL LIBRARY
OU_178891
UNIVERSAL LIBRARY

नासिकेतोपाख्यान

सदल मिश्र

OUP—707—25-4-81—10,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83.1 M67V Accession No. P.G.H6364

Author मिश्र सादक

Title नासिकेतोपाख्यान 1950.

This book should be returned on or before the date last marked below

मुद्रकः—
पं० रामनिधि त्रिपाठी
शिवराम प्रेस, बनारस

भूमिका

सन् १९०१ में कलकत्ते की एशियाटिक सोसाइटी के पुस्तकालय में रक्षित हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों की जाँच करते हुए मुझे पंडित सदल मिश्र द्वारा अनुवादित चंद्रावती अथवा नासिकेतोपाख्यान की एक प्रति प्राप्त हुई थी। उस प्रति के आधार पर उसे संपादित कर मैंने नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला में प्रकाशित करवाया था। इस बात को आज २४ वर्ष हो चुके। अब इसके दूसरे संस्करण का अवसर उपस्थित हुआ। इस बीच में पंडित सदल मिश्र के संबंध में कई बातें ज्ञात हो गई हैं, जो प्रथम संस्करण के समय नहीं ज्ञात थीं।

पंडित सदल मिश्र आरे के रहनेवाले शाकद्वीपीय ब्राह्मण थे। इनके पूर्वजों में शुकदेव मिश्र पहले पहल आरा जिले के ध्रुपडीहा ग्राम में आकर बसे थे। ये श्रीकृष्णजी के अनन्य भक्त थे और एकांत जीवन-निर्वाह करते थे। श्राद्ध, भोजन आदि में संमिलित नहीं होते थे। इस कारण उस गाँव के अन्य ब्राह्मणों से इनसे अनबन हो गई और अंत में वे उस गांव को छोड़ने के लिये बाध्य हुए। यहाँ से वे भदवर ग्राम में जाकर बसे। यहाँ के बाबू को पहले इनपर संदेह हुआ, पर जाँच करने पर जब उन्हें ज्ञात हुआ कि ये एक भगवद्भक्त सात्त्विक वृत्ति के ब्राह्मण हैं, तब उन्होंने इनका बड़ा आदर सत्कार किया। उन्होंने मिश्र जी को कई गाँव देने चाहे, पर संतोषी शुकदेव मिश्र ने केवल हसनपुरा नामक गाँव लेना स्वीकार किया। बहुत दिनों तक ये और इनके वंशधर इसी ग्राम में रहे; पर कुँवरसिंह के समय में ये लोग आरा नगर के मिश्र टोले में आकर बस गए और वहीं अब तक इनके वंशधर रहते हैं।

पंडित शुकदेव मिश्र के वंश में पंडित लक्ष्मण मिश्र हुए। इनके

तीन पुत्र थे—कृष्णमणि मिश्र, धैर्यमणि मिश्र और नंदमणि मिश्र। इन तीनों भाइयों का वंश चला और अब तक उनके उत्तराधिकारी वर्त्तमान हैं। नंदमणि मिश्र के तीन पुत्र हुए—बदल मिश्र, सदल मिश्र और सीताराम मिश्र। यही सदल मिश्र इस ग्रंथ नासिकेतोपाख्यान के रचयिता हैं। इस वंश के अनेक व्यक्ति प्रसिद्ध विद्वान् हुए हैं। पंडित सदल मिश्र भी संस्कृत के अच्छे पंडित थे। इनके वंशजों में यह प्रसिद्धि है कि अपनी विद्वत्ता के कारण ये पटने बुलाए गए थे और वहाँ से फोर्ट विलियम कालेज में काम करने के लिये भेजे गए थे। वे नासिकेतोपाख्यान की प्रस्तावना में लिखते हैं—"चित्र विचित्र सुंदर सुंदर बड़ी बड़ी अटारिन से इंद्रपुरी समान शोभायमान नगर कलिकत्ता महा प्रतापी वीर नृपति कंपनी महाराज* के सदा फूला फला रहे कि जहाँ उत्तम उत्तम लोग बसते हैं और देश देश के एक से एक गुणी जन आय आय अपने गुण को सुफल कर बहुत आनंद में मगन होते हैं। नाम सुन सदल मिश्र पंडित भी वहाँ आन पहुँचा वो बड़ी बड़ाई सुनि सर्वविद्या-निधान, ज्ञानवान्, महा प्रधान श्रीमहाराज जान गिलक्रस्त साहब से मिला जो कि पाठशाला के आचार्य हैं। तिनकी आज्ञा पाय दो एक ग्रंथ संस्कृत से भाषा और भाषा से संस्कृत किए।" इन बातों से यह स्पष्ट नहीं होता कि सदल मिश्र स्वयं नौकरी की खोज में कलकत्ते गए अथवा पटने बुलाकर वहाँ से कलकत्ते भेजे गए। जो कुछ हो, यह तो स्पष्ट ही है कि कलकत्ते के फोर्ट विलियम कालेज में ये नौकर हो गए।

* बहुत दिनों तक लोग यही समझते थे कि "कंपनी" किसी राजा का नाम है। पीछे से यह भ्रम दूर हुआ और लोगों को यह विदित हुआ कि कंपनी एक व्यापारी मंडली थी।

बाबू शिवनंदन सहाय लिखते हैं—"संवत् १९०४ का इनके नाम का एक बयनामा हमारे देखने में आया है जो इस समय उनके पौत्र पंडित रघुनंदन मिश्र जी के पास है। इसके पहले के कागजों में भी इनका नाम है। १९०५ संवत् के एक कागज में इनका नाम न होकर केवल इनके वंशधरों का नाम देखा जाता है।" इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि संवत् १९०४ और १९०५ के बीच में पंडित सदल मिश्र की मृत्यु हुई। इनके वंशधरों का कहना है कि पंडित सदल मिश्र ने ८० वर्ष की आयु पाई थी। इस हिसाब से इनका जन्म संवत् १८२४-२५ के लगभग होना चाहिए। इनके वंशधरों का यह भी कहना है कि २४-२५ वर्ष की अवस्था में ये कलकत्ते गए थे जो संवत् १९५० के लगभग पड़ती है। सं० १९६० में इन्होंने नासिकेतोपाख्यान का अनुवाद किया था। ये स्वयं यह भी लिखते हैं कि उन्होंने "दो एक संस्कृत ग्रंथों से भाषा और भाषा से संस्कृत किए।" पर वे सब ग्रंथ अब कहीं मिलते नहीं। संवत् १८८८ में इन्होंने ११०००) पर सिंगही गाँव, बयगुलफा और हसनपुरा का ठीका लिया था। ऐसा जान पड़ता है कि कलकत्ते में ३०-३५ वर्ष सेवा कर और बहुत सा धन कमाकर ये अपने घर लौट आए थे। संवत् १८६७ में इन्होंने गो० तुलसीदास के रामचरितमानस का एक संस्करण संशोधित करके छपवाया था। इस संस्करण की एक प्रति काशी नागरीप्रचारिणी सभा के पुस्तकालय में है। संवत् १८९३ में फोर्ट विलियम कालेज टूट गया था। अतएव उसके पूर्व ही उनका घर लौट आना संभव जान पड़ता है।

आधुनिक हिंदी-गद्य के प्रथम आचार्य इंशाउल्ला खाँ, लल्लूजी लाल और सदल मिश्र हैं। लल्लूजी लाल और सदल मिश्र तो फोर्ट विलियम कालेज में नौकर थे और इंशाउल्ला खाँ लखनऊ के नवाब आसफुद्दौला के दरबारियों में थे। इंशाउल्ला खाँ की भाषा में उर्दू न

के आरंभिक रूप के दर्शन होते हैं, जब तक कि उर्दू हिंदी से अलग नहीं हुई थी और न अलग होने के उद्योग में ही लगी थी। लल्लूजी लाल की हिंदी पर चतुर्भुजदास की व्रजभाषा की पुट चढ़ी हुई है और वह अपेक्षाकृत अस्थिर और अपरिमार्जित है। सदल मिश्र की हिंदी लल्लूजी लाल की अपेक्षा अधिक प्रौढ़ और परिमार्जित है। अतएव भाषा की दृष्टि से विवेचन करने पर इन आचार्यों में पहला स्थान इंशाउल्ला खाँ, दूसरा सदल मिश्र और तीसरा लल्लूजी लाल को मिलना चाहिए।

इस ग्रंथ की जो हस्तलिखित प्रति मुझे प्राप्त हुई थी, वह बीच बीच में खंडित थी। अतएव कथा को पूरा करने के उद्देश्य से मैंने अपनी ओर से कुछ वाक्यों या वाक्यांशों को जोड़ दिया है। ये सब वाक्य या वाक्यांश ऐसे [ ] कोष्ठक में रख दिए गए हैं।

काशी
५-६-२५

श्यामसुंदरदास

चंद्रावती

अथवा

नासिकेतोपाख्यान

——:※:——

सकल सिद्धिदायक वो देवतन में नायक गणपति को प्रणाम करता हूँ कि जिनके चरण-कमल के स्मरण किए ऐसे विघ्न दूर होता है औ दिन-दिन हिय में सुमति उपजती वो संसार में लोग अच्छा-अच्छा भोग-विलास कर सबसे धन्य-धन्य कहा अंत में परम-पद को पहुँचते हैं कि जहाँ इंद्र आदि देवता सब भी जाने को ललचाते रहते हैं।

दोहा

गणपति चरण सरोज द्वौ, सकल सिद्धि को राश।
बंदन करि सब होत है, पूरण मन की आश॥

चित्र विचित्र, सुंदर-सुंदर, बड़ी-बड़ी अटारिन से इंद्रपुरी समान शोभायमान, नगर कलिकत्ता महा प्रतापी वीर नृपति कंपनी

महाराज के सदा फूल फला रहे कि जहाँ उत्तम उत्तम लोग बसते हैं औ देश देश से एक से एक गुणी जन आय आय अपने अपने गुण को सुफल करि बहुत आनंद में मगन होते हैं।

नाम सुन सदल मिश्र पंडित भी वहाँ आन पहुँचा वो बड़ी बड़ाई सुनि सर्वविद्या-निधान ज्ञानवान् महा-प्रधान श्री महाराज जान गिलक्रस्त साहब से मिला कि जो पाठशाला के आचार्य्य हैं। तिनकी आज्ञा पाय दो एक ग्रंथ संस्कृत से भाषा वो भाषा से संस्कृत किए।

अब संवत् १८६० में नासिकेतोपाख्यान को कि जिसमें चंद्रावती की कथा कही है, देव वाणी से कोई कोई समझ नहीं सकता, इसलिये खड़ी बोली में किया। तहाँ कथा का आरंभ इस रीति से हुआ—

एक समय राजा जनमेजय गंगा के तीर पर बारह बरस यज्ञ करने को रहे। एक दिन स्नान पूजा करि ब्राह्मणों को बहुत सा दान दे, देवता पितरों को तृप्त करके ऋषि और पंडितों को साथ लिए वैशंपायन मुनि के पास जा, दंडवत कर खड़े हो, हाथ जोड़ कहने लगे कि "महाराज ! आप वेद-पुराण सब शास्त्र के सार जाननिहार, तिस पर व्यास मुनि के शिष्य, सब योगियों में इंद्र समान हो। ऐसी कथा कि जिसके सुनने से पाप कटे और कोई रोग न होय, भर जन्म संसार में अच्छा भोग, अंत में मुक्ति मिले, हमसे कहिए।"

प्रसन्न होकर वह बोले कि—"हे राजा ! तुम बड़े ज्ञानी हो। अच्छा, सब पाप दूर करनेवाली पुराण की कथा कि जिसके सुनने से निस्संदेह मुक्ति होती है, मैं कहता हूँ। तुम ऋषि वो सेवकों के समेत सावधान होकर सुनो।

किसी समय में ब्रह्मा के पुत्र ऐसे उद्दालक मुनि भए कि जिनके दर्शन से लोग पवित्र होते थे। वेद पुराण श्रुति स्मृति में बहुत

निपुण और दाता दयालु कहिए तो वैसे ही, बड़े समर्थ, सब मुनियों में श्रेष्ठ, कि जिनका तपस्या ही धन था, उनके सुहावने आश्रम पर कि जिसको बड़े-बड़े मुनि लोग नित्य आय सेवें और जहाँ नाना प्रकार के वृक्षों पर लता सब छा रही थीं—पिप्पलाद मुनि आन पहुँचे ।

देखते ही उद्दालक ऋषि उठ खड़े भए । सिर नवा, प्रणाम वो जैसा कुछ चाहिए वैसा आदर-भाव कर, आसन दे बैठाया । प्रीति से हाथ-पाँव धोला, कुशल क्षेम वो उनके वहाँ आवने का कारण पूछा ।

वह बोले कि हम तुम्हारी बड़ी तपस्या इस वन में सुनकर आए, तैसे ही तुमको देख बहुत प्रसन्न हुए । पर बिना ब्याह यह तपस्या अकारथ होती है; क्योंकि स्त्री के साथ तप करके ऋषि सब सिद्धि को पहुँचे और वेद की आज्ञा से संतान के लिए पत्नी सों भोग करना उचित है, नहीं तो विस बिन क्या कभी क्रिया सिद्ध होती है और पुत्रहीन के, देवता वो पितर इन दोनों में कोई संतुष्ट नहीं । जग में विसके देव पितर बहुत आनंद होते कि जिसको कुल उपजानेवाला पुत्र होता है । वो निपुत्री को घर में क्या सुख कि जिस बिना सदा अंधकार रहता है ।

इसलिए हमारी आज्ञासे और सब ऋषियों के संमति से किसी से कन्या याचकर अपना वंश उत्पन्न करो, नहीं तो यह तपस्या का परिश्रम तुम्हारा सदा ही व्यर्थ है ।

उद्दालक ने उत्तर दिया कि महाप्रभु, तप करते हमको छियालीस सहस्र बरस बीते, स्त्री के कारण अब यों उसको त्याग दें तो महा नरक भोग होए । आप बड़े हो, जैसी आज्ञा करिए ।

हँस के पिप्पलाद ऋषि ने कहा कि तुमको यह कहना उचित नहीं, क्योंकि बिना संतान योग-तप कबहीं फलदायक नहीं होता है

और संतति के लिये स्त्री के पास जाने को अगले मुनियों ने भी आज्ञा की है। तिसमें वह ब्रह्मचारी गिना जाता है कि जो मनुष्य ऋतु समय में उसके पास जाता है। ब्रह्मचर्य्यसे तप भंग नहीं होता, धर्म्मशास्त्र भी कहता है।

ऐसी साँची साँची बातें कहके मन में वेद के मंत्र जपते हुए पिप्पलाद मुनि ने फिर निपट समीप। जा उद्दालक से कहा कि संतति के हेतु भार्य्या के पास जाने से तनिक भी दोष नहीं, आप स्वायंभुव मुनि ने ऐसा कहा है। यह वृत्तांत वैशंपायन राजा जनमेजय से कहते हैं।

जब इतना कह पिप्पलाद वहाँ से बिदा भए, तब उद्दालक चिंता करने लगे कि "देखो, हमारी तपस्या में क्या विघ्न आ पड़ा। कहाँ मेरी बुढ़ापे की अवस्था कि एक भी केश काला नहीं; सो संतति के कारण किससे कन्या हम माँगें। कौन उसको देने में प्रसन्न होगा।

ऐसे व्याकुल होकर मन में ठहराया कि अब तो ब्रह्मा के पास चलिए, वे ही हमारी अभिलाषा को पुरावेंगे।

तब आस पास के ऋषियों से पूछ ब्रह्मा के निकट गए, दूर ही से दंडवत कर हाथ जोड़ लगे स्तुति करने।

उद्दालक के वचन सुन संतुष्ट हो वो ध्यान में जो थे सो आँख खोल पितामह बोले "कि हे ऋषीश्वर! कुशल से हो? तुम्हारे आश्रम में मंगल है? और यहाँ आवने का प्रयोजन सुनाओ।"

ब्रह्मा की बात सुन उद्दालक ने कहा कि 'हाँ महाराज, आपके अनुग्रह से सब प्रकार से आनंद है। मुनियों ने हमको पुत्र के लिए विवाह करने की आज्ञा दी है। इसलिए तुम्हारे शरन में आए, हमारा मनोरथ पूरण करिए।'

सुनते ही विधाता ने कहा कि "पहिले तुमको महातपस्वी कुल उद्धार करने योग्य पुत्र होगा। पीछे राजा इक्ष्वाकु के कुल की

महासुंदरी कन्या वो पतिव्रता सब गुण-भरी सो तुम्हारी भार्य्या होगी। चित्त में कुछ चिंता मत करो। हमारा कहा कभी झूठ न होगा। अपने आश्रम पर जा शिव पूजन करो।"

प्रजापति की बात सुनि चकित हो उद्दालक ने कहा कि "महाराज! आप बड़े होकर ऐसी मिथ्या बात कहते हो कि जो देखने में आई न सुनने में। भला, बिना भार्य्या भी किसी को पुत्र होता है?"

उनका यह वचन सुनते ब्रह्मा वहाँ से गुप्त हो गए। तब उद्दालक ने जी में जाना कि विधि का कहा अन्यथा नहीं। इस आस पर वहाँ से ईश्वर का ध्यान करते हुए अपने आश्रम पर आए कि जहाँ चारों ओर ऋषि लोग अपने अपने जप ध्यान में लगे थे।

राजा जनमेजय से वैशंपायन कहते हैं कि हे राजा! यह बहुत अच्छी कथा है। इसे कान दे सुनो।

वहाँ से उद्दालक स्थान पर आय फिर उसी प्रकार चित्त लगाय तपस्या करने लगे। पर दिन-रात स्त्री की चिंता में बहुत मग्न थे, इसलिये काम से पीड़ित भए।

निदान एक दिन इसी ध्यान में थे कि उनका बीज पतन हुआ। तुरंत उसे हाथ में ले कमल में रख कुश से बाँध गङ्गा में जा छोड़ दिया। दैवयोग से वह बहा हुआ चला, सो राजा रघु की पुरी के सामने आ पहुँचा।

वहाँ चंद्रावती नाम उस राजा की महासुंदरी कन्या, जिसके लक्षणों का वर्णन न तो किया जाता है, न तो कोई वैसी देवतों की कन्या न गंधर्व और नागों को देखने में आई, न सुनने में, कि जिसके रूप को देखते जग जीतनेवाले कामदेव भी मोहित होय और तीनों लोक में ऐसा कोई नहीं कि उसकी आँखों के देखने से अचेत हो न गिरे। दस सहस्र राजों की कन्या दिन-रात उसकी

सेवा-टहल में रहती थीं। अपने बाप के घर में नाना भाँति आनंद विहार किया करतीं। सागर में लक्ष्मी वो तारन्ह में चंद्रमा समान शोभती, सब रनिवास में उसके चौथाई भी रूप किसी को नहीं कि जिसको देखकर आपस में लोग सब कहते थे कि इसे विधि ने अपने हाथों से बनाया। कोई तो कहता था कि अरे! यह इंद्र की अप्सरा है कि किसी के शाप से इहाँ आ पहुँची। और राजा रघु को जो पूछो तो जिनका इक्ष्वाकु के कुल में जन्म, वेद शास्त्रों में एक, बड़े धर्मात्मा, सारी पृथ्वी का पति, काम-लोभ के जीते हुए, प्रजा पालने में सदा प्रसन्न, ब्राह्मणों का भक्त, कि जिसको सत्य ही व्रत, उसके राज्य में न तो किसी को कुछ रोग और दुःख होए, हृष्ट-पुष्ट, सब लोग अति पराक्रमी और बड़ों के आगे छोटों का मरण न था और नित्य घर-घर मङ्गलाचार होता था।

वैशंपायन जनमेजय से कहते हैं कि हे महाराज! उस राजा की चंद्रावती कन्या तरुण अवस्था में सहेलियों के साथ सब दिन गंगास्नान कर षटरस भोजन वो सोरहो शृंगार किया करती थी।

एक दिन सखियों का सिंगार कर मोतियों के हार उनके गलों में डाल घोड़ों पर चढ़ाया। किसी के हाथ में ध्वजा, वो किसी के छत्र, किसी के कर में चौंर। कितनी गाती थीं, कितनी बजातीं, कितनी नाना भाँति कुतूहल करती थीं।

उसी समय में ब्राह्मण सब आय-आय मंगल वेद-ध्वनि और भाँट-बिखार* राजा रघु के वंश का बखान करने लगे। घड़ी भर में वो गङ्गा के तट पर जा पहुँची। वहाँ बहुत सा बिहार कर उन्हीं के साथ जा स्नान करने लगी, कि देखती क्या है कि एक कमल का फूल सोने का सा बनाया, महा सुगंध, कुश से लपेटा

* भिखारी ?

हुआ सन्मुख बहा चला जाता है । तो बिलग बिलग कहने लगी कि देखो देखो, क्या अच्छा फूल बहा आता है; इसको कोई मुझे शीघ्र ला दो । मैं जानती हूँ कि स्वर्ग पर से किसी देवता का वह गिर पड़ा है कि जिसकी छबि से गंगा के दोनों ओर अब कैसे शोभायमान हो रहे हैं ।

सुनते ही एक सखी ने झट ला राजपुत्री के हाथ में दिया । वह प्रसन्न हो खोलकर ज्यों लगी उसे सूँघने, कि वह बीज जिसे उद्दालक मुनि ने उसमें रक्खा, नाक के पथ से पेट में चला गया । पर चंद्रावती ने कुछ भी न जाना कि मेरे उदर में क्या गया है और स्नान-पूजा कर हर्षित हो अपने मंदिर में सब के संग चली आई ।

पहिले मास में तो उस कन्या को कुछ अधिक सा देह में रूप उपजा और दूसरे में गर्भ का लक्षण जानने में आया । तीसरे पियरा मुँह हो गया । चौथे में रोएँ अलग अलग होने लगे, पाँचवें में कुच व नितंब ऐसे भारी हुए कि जिनके भार से अलसा कर किसी से कुछ बात-चीत न कर सकती । छठवें महीने में उसकी माता बड़ा सा पेट देख व्याकुल हो तुरंत धरती में गिर पड़ी । क्षन एक तो मूर्छित रही, पीछे कुछ एक चेत कर उठ बैठी और लगी सोचने कि क्या मैं यह स्वप्न देखती हूँ कि मेरी मति में कुछ भ्रम हुआ है कि जिसका संभव नहीं, सो देखने में आया ।

ऐसे विचार, फिर लगी कहने कि देखो रे भाई ! दश सहस्र राजकन्या सदा इसकी रक्षा में रहती हैं, तिस पर भी यह दशा हुई है ! हाय ! हाय ! कैसा कुल में कलंक हुआ !! जो सुनेगा सो क्या कहेगा ?

इस भाँति पछिताकर उससे पूछने लगी कि अरे बेटी ! यह क्या तेरी अवस्था है ? सत्य बात हमसे कहो ।

तब वह बोली, माता ! मैं कुछ नहीं जानती हूँ कि कैसा चरित्र हुआ। मैं बड़ी अभागिनी हूँ। अब प्राण ही त्यागना बना, क्योंकि किसी प्रकार से कहूँ, पर हमारी बात को कोई कदही साँच नहीं मानेगा। कहाँ सूर्य्य का वंश, कि जिसको उत्तम कीर्ति तीनों लोक में प्रसिद्ध है और कहाँ उस कुल की हम कन्या कि जिसकी जग में अब ऐसी हँसी हो। अपने पिता को कौन मुँह दिखाऊँगी। नहीं जानती हूँ कि अगले जन्म में कैसा काम किया कि जिसका महा-दुःखदायक यह फल आन पहुँचा है। जैसी शोक-संताप में अब हूँ, वैसी त्रिभुवन में जो ढूँढ़ो तो न कोई देवतों की कन्या, न गंधर्व और असुरों की, न नागों की, न किसी किन्नर और मनुष्यों की होगी।

अपना पेट फाड़ मरों तो मर सकती हूँ। पर आत्मघात वो दूसरे एक जीव का वध कि जो मेरे गर्भ में है, ये दो हत्या होती हैं, इसलिए सो भी न कर सकती हूँ। कहो क्या कहती हो ?

वह कहते ही पृथ्वी में गिर पड़ी जैसी कोई फूली-फली लता पेड़ पर से नीचे गिर पड़े।

ऐसी उसको देख रानी छाती पीटकर बोली कि बेटी ! क्या जाने किसने तुमको छला कि जिससे ऐसा काम किया। अब क्या करें, कहाँ जाऊँ औ किसको पूछूँ ?

इस भाँति बहुत सा विलाप कर निदान वह भी धरती पर गिरी। तुरंत सहेलियाँ उठकर अनेक प्रकार से समझाने लगीं।

यह वृत्तांत सारे राज में फैल गया। दिन-रात घर घर यही चर्चा हो रही कि देखो रे भाई ! स्त्री जन का विश्वास न करना। राजा रघु ने चंद्रावती को लड़कई से आज तक सुग्गा सा पढ़ाया, वो वैसा ही मानते रहे हैं। व्रत-नियम पूजा-ध्यान में उसकी लगनक देखकर जी में महाराज बहुत प्रसन्न थे कि यह कोई देवी है कि सुतपस्या से चूक के हमारे यहाँ आ जन्मी है। इसलिए दस सहस्र

अपने जात भाई की कन्या उसकी सेवा में रखी थी वो बेटों से भी अधिक प्यार करते, वो निपट भोली-सी जानते थे और ऐसा नेम आचार कि सब दिन भली-भाँति से गंगा-स्नान वो ठाकुर की पूजा, पुराणों का श्रवण होता है, और विवाह के लिये कितना हठ हुआ पर यह अभागी ने न माना, वो कुकर्म्म किया तो ऐसा कि जिससे राजा रघु के कुल में कलंक लगा।

कोई तो लगा कहने कि हे भगवान्! सब दो, पर लड़की नहीं कि जिससे लोक में हँसी होय।

वहाँ रानी उनके कहने से दो एक दिन तक उस बात को छिपाए रही। जब जाना कि अब लोगों में यही बात कानाकानी हो रही है, तब भय से डरती-काँपती और नैनों से आँसू ढलकाती, जैसे सोने की लता पर से मोतियों के फूल झरें, कहने लगी कि महाराज! बड़ा अनर्थ हुआ, इसका कुछ वारापार नहीं। जीवनदान मिले तो यह आपके आगे कहूँ कि जिसके सुनने से रों खड़े होंगे।

यह सुनते ही राजा चहुँक उठे। क्षण एक तो ईश्वर का ध्यान किया फिर बोले कि महारानी! शीघ्र कहो। क्या ऐसा अनर्थ हुआ कि जिससे इतनी घबरा रही हो? मैंने जीवदान दिया। इसका कारण कहो। हमारे जीते ही तुम्हारी [यह अवस्था होय]। रानी बोली, महाराज! बड़ा अद्भुत वृत्तांत है। आप की कन्या को बिना पुरुष-संसर्ग के गर्भ भया है। सो यह कुल को दूषन देनहारा और कीर्ति को नाश करनिहारा है। यह सुनि राजा क्षण भर तो चुप रहे। पीछे क्रोधित हो बोले, अरे पापिनी! तूने यह क्या किया? ऐसा कहके उसको वन में छोड़ आने की आज्ञा दी।

यह आज्ञा पाय सेवक रथ पर चढ़ा उस रोती भई कन्या को वन में छोड़ आए। उस वन में व्याघ्र और सिंह के भय से वह अकेली कमल के समान चंचल नेत्रवाली व्याकुल हो ऊँचे स्वर से

रो रो कहने लगी कि अरे विधना ! तैंने यह क्या किया ? और बिछुरी हुई हरनी के समान चारों ओर देखने लगी । उसी समय एक ऋषि जो सत्य धर्म में रत थे, ईंधन के लिए वहाँ जा निकले । दूर ही से उसका रोना सुनके अति व्याकुल हो लगे सोच करने कि यह तो अनाथ स्त्री कोई काँदती* है, इस महावन में कहाँ से आई ? कौन सी विपत्ति में पड़ी है ।

तब मुनि से रहा नहीं गया, सो निकट चले आये और देखकर जी में कहा कि हो न हो यह अहल्या है कि द्रौपदी, कि इंद्र की अप्सरा तिलोत्तमा कहीं से भूल पड़ी । इसके हाथ-पाँव के आगे क्या कमल का फूल कि जिनके देखने से तनिक भी नहीं मेरी आँखें तृप्त होती हैं । और चंद्रमा समान वदन, केहरि कटि, मृग का सा चंचल नयन, बड़ी बड़ी छाती कि जैसे सोने का दो कलस होय, लाल अधर, तोते की सी नाक कि जिसके नीचे एक तिल कुछ और ही शोभा दे रहा है । इस भाँति रूप देख चकित हो निदान पूछा कि कहो कहाँ से आई हो और क्यों इतनो आतुर हो रोती हो ?

कन्या बोली, महाप्रभु ! मैं राजा रघु की बेटी हूँ । चंद्रावती मेरा नाम है । मुझसी अभागी दूसरी कोई नहीं । दस सहस्र नृपराजाओं की कन्या के बीच में रहके कि किसी पुरुष का मुह अपने जानने में न देखा वो नाना प्रकार के भोग-विलास छोड़ सदा मैं ठाकुर की सेवा करती थी । न जानू कि यह गर्भ कहाँ से हुआ । इस कारण पिता ने देस-निकाला दिया । यह सत्य बात आपके आगे कही, पर विश्वास न कीजिएगा ।

ऐसा उसका मधुर वचन सुनके ऋषि दया कर बोले कि आज से तू मेरी धर्म्म की बेटी । आवो हमारे आश्रम पर चलो । और

---

* बँगला में काँदना रोने को कहते हैं ।

भी मुनि लोग वहाँ रहते हैं। उनके समेत अपनी बिपति काटो जब तलक अच्छा सा दिन न आवे।

मुनि की बात सुनि चंद्रावती बोली कि हे स्वामी! बहुत अच्छा। इस दासी पर बड़ी दया की जो आके दर्शन दिया। आपके अनुग्रह से सब पीड़ा हमारी दूर हो गई। अब तुम्हारी सेवा-टहल से संसार-सागर पार हों जाऊँगी।

इस प्रकार प्रार्थना कर उठ खड़ी भई। साथ-साथ उस स्थान पर आई कि जहाँ सैकड़ों ऋषि लोग अपना अपना योग, तप, पूजा-अर्चा कर रहे थे। वो कुंड में क्या अच्छा निर्मल पानी कि जिसमें कमल के फूलों पर भौंरे गूँज रहे थे, तिस पर हंस, सारस, चक्रवाक, आदि पक्षी भी तीर-तीर सोहावन शब्द बोलते, आस-पास के गाछों* पर कुहूँ कुहूँ कोकिलैं कुहुक रहे थे, जैसा वसंत ऋतु का घर ही होय।

राजपुत्री पवित्र आश्रम देख, वहीं सन्तुष्ट हो जी में लगी कहने कि ईश्वर ने बड़ा ही दया की जो गर्भ मुझको दिया। नहीं तो राज-भोग छोड़ वो पिता-माता की प्रीति-डोरी तोड़ क्योंकर इन महापुरुषों का दर्शन होता। भला ये भी अच्छा ही हुआ जो लोगों में हमारी हँसी हुई। और अब एकचित्त हो इन मुनियों की सेवा वो योग तप करूँगी वो आवागमन से छूटूँगी, ऐसा विचार रहने लगी।

जब नवाँ महीना बीता तब सकुचा सिर झुका उसने ऋषियों से कहा कि महाराज, अब पूरे दिन चले आते हैं, इसलिए मैं एक दूसरे स्थान में जाया चाहती हूँ जो आराम से बालक हो वो यह यज्ञशाला न अशुद्ध हो।

तब तपस्वियों ने तुरंत किसी वन में, जहाँ घने-घने पेड़ों पर

---

* बँगला और बिहारी में गाछ वृक्ष को कहते हैं।

लता पसर रही थी, उनके नीचे कोठरी-सा बना हुआ एक स्थान बता दिया।

प्रसन्न हो वहाँ वह गई। एक दिन ज्यों लगी उसे वेदना होने, त्योंही कुंज के द्वार पर जा सूर्य्य के ओर सन्मुख हाथ जोड़ खड़ी हो लगी कहने कि हे त्रिलोकनाथ! तुम सब ही के अंतरयामी हो। और हे इस वन के देवता और देवियों! तुम सब भी मेरी बात को कान दे सुनो। मैंने स्वप्न में भी कदही आज तक किसी पुरुष का मुँह न देखा होय तो यह गर्भ जैसा ही हुआ, वैसा ही निकल जाय।

इस भाँति विनती कर भीतर जा बैठी और आँख मूद ध्यान करने लगी। इतने में गर्भ नाभी से हृदय में आया। वहाँ से कंठ में जा नाक के पथ से महा तेजस्वी सूर्य्य समान पुत्र उत्पन्न हुआ।

देखते ही चंद्रावती बहुत आनंदित हो तुरंत उसे गोदी में ले उस तपस्वी से जो साथ में वहाँ लाया था, पुकार कर कहा कि हे पिता! नाक से हमको अति सुंदर बालक हुआ। क्या नाम रखें? इस समय कैसी लगन है? वह बोले कि नाक से भया इसलिये इसका नासिकेत नाम हुआ, वो लगन से जाना गया कोई बड़ा ही महापुरुष योगी होगा कि जिसके आगे देवता सब भी हाथ जोड़े रहेंगे।

इतना कह मुनियों को बुला मंगल गान कराया। वैशंपायन कहते हैं कि हे राजा! दस दिन के बीतने पर चंद्रावती नहा, दूध पिला, लड़के को घर में सुलाकर फिर ऋषियों की सेवा करने लगी।

एक दिवस उनकी टहल करते कुछ विलंब हुआ सो बालक जाग उठा। मारे भूख के चिल्ला-चिल्ला के रोने लगा। तब वह कोप से आकुल हो उसके निकट जा लगी कहने "अरे दुष्ट! देख, तेरे कारण माँ-बाप ने घर से मुझे निकाल दिया वो लोगों में हँसी हुई। तू बेटा

नहीं कोई बैरी आ जनमा। अब हमारी तपस्या वो मुनियों की सेवा में बाधा करने चाहता है। इससे तेरा दूर ही होना अच्छा है।"

ऐसा कह एक घास के बोझे पर रख के उसे गंगा में बहा, आप जा मुनियों को हर्षित हो फिर सेवने लगी कि जिससे थोड़े ही दिन में ज्ञान-विज्ञान को पहुँची। और बालक जो बहा हुआ चला, सो कुछ दूर आगे गंगा के तीर उद्दालक ऋषि स्नान करते थे, उनके समीप आ लगा।

देखते ही वह चकित हो चारों दिशा चितौने लगे कि किस निर्दई ने घास पर इतना बड़ा लड़का बहा दिया है! कुछ भी उसके जी से दया न उपजी! इतने में ब्रह्मा की बात उनके मन में आई कि जो पहिले पुत्र तिस पीछे तुमको स्त्री मिलेगी।

तब तुरंत हर्ष से दूने हो वहीं लड़के को गोदी में उठा लिया और वेदमंत्र ले नहलाय बाहर आए। बार बार विधि की स्तुति करने लगे कि धन्य हो पितामह, तुम्हारा कहा क्योंकर झूठ होए। चलो पुत्र की चिंता तो गई। अब भली भाँति से तपस्या करूंगा जो स्वर्ग से न टालूंगा।

ऐसे विचार अपने आश्रम पर पहुँच पुत्र को कहा कि सुनो पूत! यह पुण्य स्थान में नाना प्रकार के आचारों से महर्षियों को प्रसन्न, पिता की सेवा, कंद मूल आहार करते रहो, जो इसी में सब विद्या भी तुमको अनायास आ जायगी।

इतनी आज्ञा कर उद्दालक मुनि योग्य पुत्र पा कृतार्थ हो अपनी क्रिया में अति सावधान भए।

वैशंपायन राजा जनमेजय से कहते हैं, हे महाराज थोड़े दिन बीते पर जब रघु की पुत्री का क्रोध सब मिट गया, तब पुत्र का

२

ऐसा मोह हुआ कि जिसमें शोकसागर में डूबी चारों दिशा शून्य वो अँधार ही देखने में आया ।

चौपाई

योग और तप कुछ नहीं भावे । रह रह नयन नीर भर आवे ।
क्यों हूँ चण भर धीर न पावे । आकुल हो हो समय बितावे ॥

दिन रात रोने कलपने वो कहने लगी कि धिक्कार है मुझको जो बिन अपराध बालक को नदी में बहा दिया । क्या मेरी तपस्या यह फलैगी कि जिसने ऐसा अधर्म किया, मनुष्य तो क्या कोई पशु भी न यह काम करेगा कि जो मैंने किया है । हाय पुत्र ! कहाँ गए ? तनिक भी मेरे मन से न भूलते हो । अब बिना तुम्हारे मिले न तो मैं कुछ खाऊँगी न पीऊँगी ।

ऐसे विचार पुत्र के लिए आकुल हो वहाँ से उठ जहाँ तहाँ बौड़ी सी दौड़ी फिरती और जिस तिस वनवासियों से पूछती कि अरे लोगों ! तुम सबने इधर एक लड़का तो कहीं नहीं देखा है ?

जब किसी ने कुछ भेद न बताया तब शोक-संताप से अचेत हो निदान गंगा के तीर तीर उसे ढूँढ़ती हुई चली । सो कुछ दूर आगे बढ़ गई कि जहाँ बहुत से मुनियों के सुथरे सुथरे आश्रम थे और वोही बालक वहाँ गंगा में नहाने को आया था ।

देखते ही हर्ष से चौगुणी भई वो झट उसे गोदी में उठा बार बार मुह चूमने लगी कि कहो पुत्र, किसने इतना बड़ा पाल के किया ? उस मुनि का कौन-सा आश्रम और क्या नाम है ? मैं तुम्हारी माता हूँ; मुझे नहीं चीन्हते हो ?

बालक बोला कि माता ! मैं उद्दालक ऋषि के स्थान में रहता हूँ कि जो एही साम्हने देखती हो और वे ही हमारे पिता, माता, देवता, गुरु हैं । अब ही कंद मूल लाने बाहर गए हैं ।

यह वचन कह अपने आश्रम पर उसे वह ले गया और आसन दे बैठाया। पानी लाकर पाँव को धो दिया वो कहा कि माता तुम इहाँ आराम करो, तब तक इस अग्निशाला को हम लीपते हैं।

सुनते ही वह बोली कि पुत्र ! तुम रहो, आज मैं ही लीपौंगी। ऐसे कह उठके सारे घर को बोहार-सोहार, गोबरी-मिट्टी पानी लाय बाहर भीतर बहुत सुंदर लीप पोत आप गंगा के तीर जा बैठी।

इतने में उद्दालक ऋषि वन से कंद मूल ले आन पहुँचे। देखते ही आश्चर्य माना कि आज तो बड़ी भाँति से शाला लीपी गई।

निदान हस के बोले कि पुत्र ! हम तुम्हारे भक्ति-भावसे निपट प्रसन्न भए। माँगो, हमसे क्या वर चाहते हो। तब नासिकेत ने कहा कि महाराज ! यह काज मैंने नहीं किया, माँ मेरी आई है। उन्होंने आश्रम को ऐसा सोहावन किया है। उद्दालक ने पूछा कि बेटा ! तुम्हारी माता कहाँ है ? बुला लावो, हम देखेंगे।

सुनते ही वह गंगा-तीर दौड़ा गया और माँ से बोला कि पिता हमारे आए हैं, तुम्हें बोलाते हैं। चलो, वहाँ आहार कर रहो।

वो बोली कि पुत्र ! क्या अजगुत कहते हो कि जिससे लोक में निंदा और अंत में नरक होय। भला सुनो तो, पिता माता, भाई गोतिया ए सब कन्यादान कर सकते हैं, पर पुत्र को कहीं नहीं सुना जो अपनी माता को और किसी को देता है।

वो क्योंकर मैं बड़े कुल की कन्या, फिर तिसमें तपस्विनी अपने से पति करू ? सो हमारे कहे से जाव यह बातचीत सब बाप से कहो, वे जैसा कुछ उचित होगा सो करेंगे।

तब वह उठ पिता के पास आया। देखते ही वे बोले अरे पुत्र ! अकेले ही तू चला आया, उसको क्यों नहीं लाया ?

नासिकेत ने कहा कि महाराज ! मैंने तो कहा था, पर आपके

निकट आना उनके जी में न आया और उन्होंने कहा कि सुनो पूत, मेरे यह युवा अवस्था से मत भूलो कि जिसी किसी के पास यह जाती है। मैं जवान हूँ सही, पर सैकड़ों पतिव्रता में एक पतिव्रता वा राजा की कन्या हूँ; बिना व्याह तुम्हारे पिता के निकट नहीं जा सकती। वे भी वेद-पुराण सब शास्त्रों से इसका दोष जानते होंगे।

उद्दालक बोले कि अच्छा पुत्र, जाना, बिना विवाह यहाँ नहीं आवेगी। फिर जा पूछो कि तुम कौन से राजा की कन्या हो, वो अल्प बयस वनवास हुआ सो क्या कारण। हम जो तुम में जन्मे सो किस प्रकार से, इसका उत्तर ले आवो।

पिता का संदेश फिर उसने अपनी माता को जा सुनाया। तब वो बोली कि पुत्र! तुम्हारे पिता तो सब हमारा वृत्तांत आप ही जानते होंगे, क्योंकि बड़े सिद्ध हैं। तो भी सुनो, मैं कहती हूँ।

आज काल्ह सारे पृथ्वी का पति ऐसे राजा रघु को ईश्वर ने बनाया है कि जिसका उत्तम जश देवता लोग भी स्वर्ग में गाया करते हैं औ सब धर्म्मात्माओं में आगे वही गिने जाते हैं। उन्हीं की तो मैं बेटी हूँ। चंद्रावती मेरा नाम है। क्या क्या सुंदर दस सहस्र राजाओं की कन्या दिन-रात हमारी सेवा में हाथ जोड़े खड़ी ही रहती थीं। आदर भाव जो पूछो तो बेटों से भी अधिक पिता मुझे मानते थे।

एक दिन विपत की मारी हुई सहेलियों के साथ मैं गंगा नहाने को गई। वहाँ एक कमल का फूल कुश से लपेटा हुआ धारा में बहा चला आता था। बहुत सुंदर देख एक सखी ने उसे हमारे हाथ में ला दिया। गाँठ खोल लगी जो मैं सूँघने सो वहीं उसके भीतर से कुछ दूध सा नाक के पथ से मेरे पेट में चला गया। वो गर्भ का कारण हुआ। थोड़े दिन बीते जहाँ तहाँ यह बात कानाकानी होने

लगी। निदान पिता के कान में जा पड़ी। सुनते ही वह आग हो गए। तुरंत मारने की आज्ञा दी। पर मंत्रियों के कहने से एक महावन में छोड़वा दिया। दैवयोग से फिरते फिरते एक मुनि वहाँ जा नकले। रोती हुई मुझको देख बेटी कह अपने आश्रम पर ले जा पालने लगे, थो उन्हीं के स्थान में मेरी नाक से, पुत्र, तुम्हारा जनम हुआ, इसलिये ऋषि ने नासिकेत नाम रखा।

एक दिवस मुनियों के निकट हमको कुछ अधिक अटकाव हो गया, इसमें बार बार तुम घर में रोने लगे। तब क्रोध की लहर जो उठी सो आकुल हो मैं दौड़ी हुई गई। जाते ही घास के बोझ पर रख गंगा में जा तुमको बहा दिया। कितने एक दिन पीछे मोह से अचेत देखने के लिये फिर मैं गंगा के तीर पर गई, वो सब ठाँव ढूढ़ती खोजती अब इहाँ आन पहुँची हूँ।

माता की इतनी बात नासिकेत ने अपने पिता को जा सुनाई। बहुत आश्चर्य्य मानकर वे बोले कि बड़ों का कहना क्या कबही झूठ होता है! देखो, ब्रह्मा ने जो कहा सो देखने में आया। अच्छा पुत्र! कंद मूल भोजन करा अपनी माता को साथ ला रखो। राजा रघु के पास कन्या याचने को मैं जाता हूँ।

ऐसे कह वहाँ से चले, सो कई एक घड़ी में उनके नगर में जा पहुँचे। चारों ओर पुरी की शोभा और लोगों को अति सुखी देखते हुए बहुत पसन्न हो नृप के द्वार पर गए।

तुरंत द्वारपालों ने रघु से जा कहा कि महाराज! एक कोई ऋषि महा तेजस्वी बाहर आय खड़े हैं।

सुनते ही वे मंत्रियों को साथ ले दौड़े हुए आए। आवते ही मुनि के चरणों पर गिर पड़े और हाथ पकड़ भीतर ले जा अपने सिंहासन पर बैठाय कुशल क्षेम पूछ गंगाजल ले ऋषि के पाँव पखार चरणोदक लिए और जैसा कुछ चाहिए, वैसा आदर मान

कर हाथ जोड़ कहने लगे कि महाराज ! बड़ा अनुग्रह किया जो आके दर्शन दिया। अब हमारी सब क्रिया वो जन्म सुफल हुआ। चाहिए कि आज से मेरे राज में सब भला दिन हुवा करेगा, क्योंकि जहाँ तुम से ऋषियों की दया है, वहाँ सदा ही आनंद बिहार होता है। अब कहिए किस कारण से यहाँ आगमन हुआ, सो इस दास को सुनाइए।

ऐसी नृप की मीठी मीठी बातों से हर्षित हो बार बार आसीस कह उद्दालक बोले कि धन्य हैं तुम्हारी माता वो पिता कि जिनको तुमसा धर्म्मातमा पुत्र हुआ और स्वर्गलोक में देवतों की कन्या दिन-रात घर घर तुम्हारा गुण गाती हैं। तुम्हें बड़ा जान कन्या याचने को मैं आया हूँ। धर्म्मावतार ! वेद की विधि से हमको उसे दीजिए तो लाख गो-दान किए का फल पावोगे।

यह बात सुनके नरेश ने कहा कि स्वामी ! अन्न-वस्त्र, हाथी-घोड़ा द्रव्य जितना चाहिए सो हमसे सब लीजिए, पर कन्या तो मेरे घर में नहीं जो आपको मैं दूँ।

मुनि बोले कि सत्य, वह पतिव्रता कन्या बिना ब्याही हुई तुम्हारे मंदिर में नहीं, पर कहीं होगी। कुल बढ़ाने के लिये मुझको दीजिए, कोटिन्ह अश्वमेध यज्ञ का पुण्य सहज में होवेगा।

ऋषि की आश्चर्य्य बात सुन शोक से आकुल हो सकुचा कर राजा कहने लगे कि महाराज ! प्राण से भी अधिक प्यारी एक पुत्री हमको थी सही, पर कुछ दोष सुनि मारे क्रोध से उसे घर से मैंने निकाल दिया। सो आपके योग्य नहीं और ईश्वर जाने कि अब जीवती है कि मर गई।

तब उद्दालक मुनि पिछला समाचार भूपति को सुनाने लगे। जिस प्रकार ब्रह्मा से वर मिला और अपना बीज कमल के फूल में रख गंगा में जो बहा दिया था, विसके सूँघने से चंद्रावती को गर्भ

हुआ। सो देख राजा ने वनवास दिया। वहाँ एक मुनि के आश्रम पर उसको नाक से पुत्र हुआ। वो आगे नासिकेत, पीछे चंद्रावती की अपने यहाँ आवने की बात सो सब मुनि ने बेवरे समेत राजा को सुनाई।

तब वे सुनकर बार-बार पछिता पछिता रो रो कहने लगे कि हाय! हाय! यह देवचरित्र मैंने कुछ नहीं जाना। हम सा पापी, अधर्म्मी दूसरा कोई नहीं जो बिना अपराध बेटी को वनवास दिया।

ऐसे कहते हुए वहाँ से तुरंत हर्षित हो उठे। वो भीतर जा मुनि ने जो आश्चर्य्य बात कही थी, सो पहिले रानी को सब सुनाई। वह भी मोह से व्याकुल हो पुकार पुकार रोने लगी वो गिड़गिड़ा-गिड़गिड़ा कहने लगी कि महाराज! जो यह सत्य है तो अब ही लोग भेज लड़के समेत झट उसको बुला ही लीजिए, क्योंकि अब मारे शोक के मेरी छाती फटती है। कब मैं सुंदर बालक सहित चंद्रावती के मुँह, कि जो वन के रहने से भोर के चंद्रमा सा मलीन हुआ होगा, देखोंगी। देखो यह कर्म्म का खेल, कहाँ इहाँ नाना भाँति भोग-विलास में वो फूलन्ह के बिछौने पर सुख से दिन रात जिसके बीतते थे, सो अब जंगल में कंद मूल खा, काँटे कुश पर सोकर स्यारों के चहुँदिशि डरावन शब्द सुनि कैसे विपति काटती होगी।

राजा बोले कि माता पिता से प्राणी का एक जन्म ही तो होता है और सुख दुख जो पूछो तो जब जैसा बदा तब तैसा, क्या राजा क्या प्रजा, सब ही बड़े छोटे को होता है।

इतने में जहाँ से सखी-सहेली और जात भाइयों की स्त्री सब दौड़ी हुई आईं, समाचार सुनि बहुत जुड़ाईं, मगन हो हो नाचने गाने बजाने लगीं, वो अपने अपने देह से गहना उतार उतार सेवकों को देने लगीं और अनगणित रुपैया अन्न वस्त्र राजा रानी ने ब्राह्मणों को बोला बोला दान दिया। आनंद बधावा बाजने लगा।

हर्षित हो नरेश ने वहाँ से सभा में जा ऋषि से कहा कि महाप्रभु ! आपने मेरा बड़ा कलंक मिटाया है। इस आनंद का कुछ पारावार नहीं। अब निचिंत हो इहाँ बिराजिए, कन्या मँगा आपको मैं दूँगा।

ऐसे कह अमृत पदार्थ भोजन करा अति आदर से मुनि को टिकाया, वो तुरंत सेवकों के सहित पालकी भेज नाती समेत बेटी को वन से मँगा लिया। गले लगा सब रनिवास भेंट किया। बालक गोदी में ले मतारी लड़की को घर में बैठा रो रो बन की बात पूछने लगी। भाई गोतिया, हित मीत नगर के लोग देखने को आए। भीतर-बाहर नृप के मंदिर में मारे भीड़ के उथल-पुथल हो गया। तब भूप ने पंडितों को बुला दिन बिचार बड़ी [प्रसन्नता से सब] राजा वो ऋषियों को नेवत बोलाया। लगन के समय सबों को साथ ले मंडप में कि जहाँ सोनन्ह के थंभ पर मानिक दीप बरते थे, जा पहुँचे। मोतिन्ह से पूरा हुआ चौक में रतन जड़ा पीढ़ा रखवा उस पर वर कन्या दोनों को पटंबर वो गलों में हीरे की माला पहिरा बैठाया और वेदविधि से ब्याह आरंभ किया। ब्राह्मण सब वेद पढ़ने लगे। भाँति भाँति के बाजन लगे बाजने, वो कथक गाने, बन ठन वेश्यागण जहाँ तहाँ नाचने, हर्षित हो राजा ने कन्यादान कर सहस्र हाथी, लाख घोड़े वो गो, असंख्य बासन भूषण वस्त्र रुपैया जेवाई को यौतुक दिया। फिर हाथ जोड़ बिनती किया कि सुनिए महाराज ! आपने निपट हमको सनाथ किया। मेरे घर में ऐसी कोई वस्तु नहीं कि जिससे तुम्हारी मैं पूजा करूँ। देखिए, सागर को जल से, सूर्य्य को दीप से पूजते हैं। तिन्हको क्या उनसे आनंद होता है ? नहीं, महात्मा लोग आदर मान ही से संतुष्ट होते हैं।

इतनी कह ऋषि के चरण पर गिर पड़े। अति प्रसन्न हो मुनि उठा पीठ ठोंक आशीश दे बोले कि धन्य हो राजा रघु ! क्यों न हो। मुह पर कहाँ तक बड़ाई करें। भगवान् ने तुमको बड़ी बुद्धि

दी है। ईश्वर करे यों ही सदा फूले रहो और यह हमारे यौतुक को हाथी घोड़े द्रव्य तुम्हारे ही घर में रहें, क्योंकि वन के बसनेवाले तपस्वियों को इनसे क्या काज।

ऐसे कह धन छोड़ सब से मिल नासिकेत समेत भार्य्या ले उद्दालक मुनि वहाँ से अपने आश्रम पर आए।

तब राजा जन्मेजय ने वैशम्पायन ऋषि से कहा "हे महाराज! सुना है जो स्थान पर आके कुछ दिन के बीते पर पिता के शाप से जीवित ही नासिकेत यम के पास गए और आए सो सब कृपा कर हमको सुनाइए कि जिससे संदेह मेरा दूर होए।"

वे बोले, हे राजा! अति आश्चर्य कथा है, तुम्हारी भक्ति से बहुत प्रसन्न हो मैं कहता हूँ, एक चित्त हो सुनो—

इस प्रकार राजा रघु की बेटी चंद्रावती को ब्याह साथ ले फिर उद्दालक तपस्या करने लगे। और नासिकेत को योग की श्रद्धा हुई सो वे लगे योग करने।

एक दिन पिता ने उनको आज्ञा दी कि पुत्र! आज हमको अग्निहोत्र यज्ञ करना है, तुम कंद-मूल, फूल-फल जितना मिले सो शीघ्र जा ले आओ।

सुनते ही वे उठ खड़े भये और किसी घने वन में जा पहुँचे। वहाँ हंस सारसों से सुशोभित ऐसा कोई सुंदर सरोवर देखा कि जहाँ अच्छा निर्मल पानी, तिस में भाँति भाँति के कमल फूले थे, और उसके तट के वृक्ष सब अमृत समान फलों से फले थे। तब हर्षित हो उसके तट पर जा विधि से स्नान-संध्या कर शिव की पूजा करने लगे और समाधि लगाई, सो बरस दिन उनको वहाँ बीत गया। पीछे जब ध्यान छूटा तो तुरंत कंद-मूल, फूल-फल, कुश वो ईंधन ले पिता के पास आन पहुँचे। देखते ही वे क्रोध से लाल आँख कर बोले—

चौपाई

इतना दिन कहो कहाँ लगाए। तेरे कारण बहु दुख पाए॥
अग्निहोत्र वह यज्ञ हमारा। तुझ बिन गया अकारथ सारा॥

पुत्र करते हैं सुख पाने को, नहीं तो निपुत्र होना अच्छा। अब ही से पिता माता को दुःख देने लगा, न जाने आगे क्या करेगा। देखो अग्निहोत्र से ब्रह्मा आदि देवता और पितर सब संतुष्ट होते है, सो हमसे कुछ हो सका नहीं।

पिता की बात सुनि नासिकेत बोले कि अग्निहोत्र कर्म्म केवल संसार के बंधन के लिये है, मेरे जानने में योग समान कोई दूसरी क्रिया मुक्तिदायक नहीं, कि जिसको ब्रह्मा आदि देवता सब भी साधते रहते हैं।

उद्दालक बोले, वेद पढ़ि अग्निहोत्र करके करोड़न्ह बरस सुरपुर में नाना भोग-विलास करते हैं। योग से कहो क्या होता है।

नासिकेत ने कहा, वेद पढ़ि अग्निहोत्र करने से बार बार संसार में आते जाते हैं। योग साधने से इस देह से मुक्ति हो आनंद बिहार करते हैं।

यह समाचार वैशंपायन मुनि राजा जन्मेजय से कहते हैं कि इस प्रकार पुत्र को बराबर उत्तरदायक जान उद्दालक ऋषि ने शाप दिया कि जाव, अब ही तुम यमलोक सिधारो। अब इहाँ तुम्हारे रहने से हम प्रसन्न नहीं। पहिले तो वे डरावने शाप से लगे काँपने, फिर धीरज कर योग के बल से तुरंत यम के निकट चल खड़े भए।

सुनते ही आसपास के मुनि सब हाय हाय करते दौड़ आए। सिर में जटा, अंग में बभूत, केले के छिलके का लंगोट बाँधे, मृग का चर्म ओढ़े; छोटा सा लड़का जान, मीठी मीठी बात कहते देखकर बहुत पछताने लगे।

पाँव पकड़ मतारी रोने कलपने लगी। तब उद्दालक मुनि मोह

से अकुलाकर कहने लगे, क्यों पुत्र ! हमको विसराए चले जाते हो। हम समान कुटिल कठोर निर्दयी दूसरा कौन जग में होगा जो तुमको शाप दे। क्योंकर पूत उस पुरी में जावोगे कि जहाँ राजा कहिए तो यम है, वो महाभयावनी बैतरनी नदी बहती है, बाट में कितने एक दूर तक सदा अग्नि ऐसी बरती रहती है कि जहाँ पापी सब जा जा जलते हैं ?

नासिकेत ने कहा, पिता ! कुछ खेद मत करो, आपके प्रताप से यमराज को देख शीघ्र मैं चला आऊगा। तुमसे पिता की बात जो सदा सत्य होती आई है, सो मैं झुठाने नहीं सकता हूँ। देखिए, सत्य ही से चंद्रमा सूर्य्य नित्य भ्रमते हैं। सत्य ही स्वर्ग में है, नहीं तो बिना उसके नरक भोग होता है। इसलिए यम की पुरी को देखूँगा। पिता ! मन को आकुल मत करो। इतना कह माता सहित पिता वो ऋषि को प्रणाम कर झट वहाँ से अंतर्धान हो शिव का मंत्र जपते वो ब्रह्मा का ध्यान करते चले, और बड़े सिद्ध थे इस कारण पल भर में यम की वह सभा में, कि जहाँ अत्रि आदि अनेक ऋषि लोग अपनी अपनी पोथी खोल न्याय विचार यमराजा से कहते थे, जा पहुँचे।

चौपाई

शिव स्वरूप अति सुंदर बालक। निपट छोट देखत सुखदायक ॥
जटा मुकुट वो भस्म लगाए। जातेहि सकल सभा [मन] भाए ॥

तब सिर नवाय प्रणाम कहि हाथ जोर लगे धर्म्मराज की स्तुति करने।

वैशंपायन मुनि राजा जनमेजय से कहते हैं, सूर्य्य समान तेजस्वी नासिकेत मुनि को, जिनके जाने से सभा शोभने लगी, देखते ही धर्म्मराज हर्षित हो तुरंत उठ खड़े भए। आदर मान कर

निकट अपने आसन पर ऋषि को बैठाया वो प्यार से समाचार पूछने लगे।

चौपाई

बालहि पन में बड़ी सिधाई। कहो मुनीश कैसे यह पाई॥
धन्य पिता जिनके तुम भए। तुम्हें देख पातक गए॥
कारण कौन यहाँ तुम आए। बार बार मेरे गुण गाए॥
अमृत बाणी बहुत सुनाई। जो कहत सोहावनि अति सुखदाई॥

इतनी यम की बातें सुन नासिकेत ने कहा, दीनदयाल! अपनी भूल कहाँ तक मैं आपको सुनाऊं। जब कुमति आ घेरती है तब कैसहू कोई ज्ञानी होय, ज्ञान ठिकाने में नहीं रहता। एक तो पहिले आज्ञा में चूके ही थे, फिर ज्ञान की चर्चा में ढिठाई कर पिता को बराबर जा उत्तर दिया। इस अपराध से झठ उनके मुख से यह बात निकल गई कि जा अब ही यमपुरी को देख; तू हमारे साथ रहने योग्य नहीं। सो महाराज! पिता का वचन सत्य करने के लिये तुम्हारे समीप आया हूँ। जैसी कुछ आज्ञा होए सो मैं करूं। हस के यम बोले कि महाप्रभु! तुम समान मुनि को, कि जो अब हो ऐसा योग में मगन हो संसार की माया मोह त्याग जो चाहे सो करे, जहाँ इच्छा आवे तहाँ चला जाय, देखकर अति आनंद हमको होता है। कहो क्या मन में है सो वर मुझसे माँगो।

नासिकेत बोले, महाराज! ऐसी दया करते हो तो चित्रगुप्त समेत अपनी सारी पुरी वो धर्मात्मा लोग जहाँ पुण्य का अच्छा फल वो पापी जन नरक भोगते हैं, सो सब स्थान दिखावो। यही मेरे मन की लालसा है।

तुरंत उनने दूतों को बुलाके कहा कि यह ऋषि बड़े सत्यवादी मर्त्यलोक से पिता के शाप पाय यहाँ आए हैं। जाव, सगरे पुर

का दर्शन इन्हें करा लावो, कि जिससे अपना मनोरथ पूरण कर हर्षित हों।

प्रभु की इतनी आज्ञा सुनि दूत सब वोंहीं उनको चित्रगुप्त के पास ले गए और कहा कि धर्म्मावतार! यमराज ने हमको भेजा है। बाप का वचन रखने के लिये ये महापुरुष यहाँ आए। जो कुछ कहते हैं सो सावधान होकर सुनिए।

किंकरों की यह बात सुनि चित्रगुप्त ने मुनि से पूछा कि महाराज! तुम्हारे दर्शन से निपट हम संतुष्ट भए, कहो क्या अभिलाष है, सो मैं पूरण करूँ।

नासिकेत बोले, ईश्वर ने अति उत्तम तुमको बनाया है, सब शास्त्र के ज्ञाता, धर्म्म-अधर्म्म के विचार और तेज में देखते हैं कि यम के समान ही हो। और प्राणियों के सकल कर्म्म के जाननिहार बार बार मैं तुमको प्रणाम करता हूँ। पुण्य पाप के कारण से सुख दुःख के जो जो स्थान इस नगर में हैं सो देखने की मेरी इच्छा है। कृपानिधान! दया करके हमारे मनोरथ को पुराओ।

वैशंपायन कहते हैं, इस प्रकार से बिनती किए पर चित्रगुप्त की आज्ञा ले दूतों ने नासिकेत को ले जा स्वर्ग, नरक, जहाँ पुण्य पाप के फल पावते हैं, दिखा सुना प्रसन्न कर फिर चित्रगुप्त को कहते हुए धर्म्मराज के पास ले आय खड़ा कर दिया।

महातेजस्वी व समर्थ जान उनके आवते ही वे उठ खड़े भए और आसन दे बैठाय प्रीति कर पूछने लगे कि कहो नासिकेत ऋषि! चित्रगुप्त समेत सारे पुर वो नाना भाँति के लोग जो अपने अपने कर्म्म का फल भोगते हैं, देख आए? श्रद्धा पूरी भई?

वे बोले, महाराज! तुम्हारे प्रसाद से सब स्थान से मैं हो आया। अब माता पिता हमारे शोक से कलपते होंगे, आज्ञा करो तो उनका जा दर्शन करूँ।

तब इतना वचन सुनि धर्म्मराज निपट हर्षित भए, वो यह वर दे उनको अपने इहाँ से बिदा किया कि आज से तुम अपने योग के बल से सब दुःख से छूट और मृत्यु को जीत युवा स्वरूप हो सदा आनंद विहार में मगन रहो और जो तुम्हारे कुल में होगा सो हमारा कबहीं न मुह देखेगा ।

इस प्रकार से यह वर पाय नासिकेत मुनि मन के वेग समान वहाँ से चले, सो पल भर में जहाँ माता पिता मारे मोह से दुबरा कर मरने योग्य हो रहे थे, वहाँ अचानक जा पहुँचे, वो जाते ही दोनों की प्रदत्तिणा की, वो चरण छू प्रणाम कर संमुख जा बैठे ।

[पत्नी] सहित उद्दालक ऋषि पुत्र को कुशल से देख बहुत हर्षित भये वो तुरंत गोदी में बैठा अति आनंद से रो रो बार बार मुह चूमने लगे और कहने लगे कि नासिकेत ! आज हमारा जन्म स्वारथ हुआ । हम समान क्रोधी दुराचारी पापी संसार में कौन होगा जो बिना अपराध शाप दे तुमको संकट में डाला । धन्य हो पुत्र, कि इसी देह से यम की पुरी को देख ज्यों के त्यों फिर चले आए । जग में एक से एक सिद्ध हुए और हैं, पर मैं जानता हूँ कि तुम्हारे गुण वो तेज को कोई दशांश भी नहीं पा सकता है । कहो कैसा धम्मराज का लोक वो नगर है ? कैस यम का रूप, किस प्रकार की बाट कि जिससे इतना शीघ्र गए वो आए ? क्या खाने पीने को पाया ? किस रीति से बातचीत की ? और जो कुछ अचरज देखा सुना हो सो हमसे कहो कि संदेह मिटे, वो जो करने को होय सो मैं करूं ।

नासिकेत बोले, "पिता ! आपके पुण्य प्रताप से यम के मंदिर हम गए । सब के संहारकर निहार दूत सहित यमराज, पुण्य पाप के लिखनेवाले चित्रगुप्त और भाँति भाँति के देवता अनगणित मैंने देखे । बड़ी स्तुति से रिझाकर यम से यह वर पाया कि इसी देह से

जाओ, अब तुम्हारा जन्म मरण न होवेगा और युवा वयस सब दिन सुख में भरे पुरे रहोगे।"

वैशंपायन कहते हैं, इतने में नासिकेत धर्म्मराज के पुर से हो आया, यह सुनि ऋषि लोग बहुत चकित हो अपने अपने आश्रम में जिस भाँति से तप करते थे, उसी प्रकार से यमलोक के समाचार पूछने के लिये चल खड़े भए। कितने एक तो नीचे माथ ऊपर पाँव किए, और कितने एक ही चरण से खड़े, कोई दोनों, कोई एक ही हाथ उठाए, किसी को देखो तो मौन ही व्रत किए, कोई सूखे पत्ते ही खा, कोई निराहारी हुए, बहुतेरे संसार सागर पार होने को योग ही में मगन दिगंबर वेष बनाए, कठिन से कठिन तपस्या में मन लगाए, जहाँ पिता के समीप नासिकेत बैठे थे वहाँ आन पहुँचे।

देखते ही वे हर्षित हो उठ खड़े भए वो प्रणाम कर मिल भेट, कुशल क्षेम पूछ, आसन दे एक एक को अलग अलग बैठा, पाँव धुला, आचमन करा, अक्षत चंदन फूल ले सबों को पूजने लगे।

तब समय जान ऋषि लोग बोल उठे कि नासिकेत! हम तुमसे अति प्रसन्न हुए। शिष्टाचार तो जैसा कुछ चाहिए वैसा हो चुका वो होता रहेगा, अब यमलोक की बात सुनावो। कैसी वह पुरी है कि जहाँ सदा आप धर्म्मराज विराजे रहते हैं? कैसे यम के दूत हैं? क्या वहाँ की रीति रहन ज्ञान तपस्या वो कैसी वहाँ वैतरणी नदी है? और जहाँ जो करते हैं सो वहाँ कैसे भोगते हैं? किस करम के फेर से यम के कोप में जा पड़ते हैं? कैसा उनका दंड व कैसे चित्रगुप्त हैं जो प्राणियों के धर्म्म अधर्म्म लिख धर्म्मराज को जनाते हैं? पास में उनके कौन कौन मुनि लोग रहते हैं? सो सब कृपा कर कहो कि जिससे अति संतुष्ट हो तुम्हारे गुण को गावें।

उनकी इतनी बात सुनि बीच में बैठ नासिकेत मुनि कहने लगे

कि जितने तुम साधु संत हो अब सावधान हो सुनो। ऐसी आश्चर्य यह कथा है कि जिसके श्रवण से रोमांच होते हैं।

धर्म्मराज के लोक में भाँति भाँति के लोग और वृक्षों से शोभित चार सौ कोस लम्बी चौड़ी चार द्वार की यमराज को पुरी है, कि जिसमें सदा आप वे अनेक गण गंधर्व ऋषि वो योगियों के मध्य में धर्म्म का विचार किया करते हैं। तिस पुरी में जिस द्वार से जो प्राणी जाता है सो मैं तुमसे कहता हूँ।

देवता पित्तर गुरु के भक्त, क्रोध लोभ को जितनिहारे, दान धर्म्म में सब दिन जिनकी उत्तम मति रहती है, वो जो जेठ बैसाख में जल दे प्राणियों की प्यास मिटाते, वो जाड़े में वस्त्र दे दुखी जन को पालते हैं, ऐसे जितने लोग हैं सो तो वहाँ पूर्व द्वार से जाते हैं, वो नाना भोग विलास करते। और हरि हर दुर्गा के भक्त, अतिथि देवताओं को पूजते, तीर्थों में नहाते, आहार को जीतते, गौ बचाने को युद्ध करते, ज्ञान के लिये साधुन का संग करते, ऐसे जो महात्मा लोग हैं सो सब उत्तर द्वार से जो परमपद को पहुँच मन भावन सुख को पाते हैं। और धर्म्म में जिनको श्रद्धा है, सत्य ही बोलते, सबसे नय चलते, पराए को हिंसा निंदा नहीं करते, विष्णु के भक्त, परद्रव्य को मिट्टी, परस्त्री को माता समान जानते हैं, ऐसे जो कोई महापुरुष लोग हैं सो सब पश्चिम द्वार से वहाँ पहुँच विमानों पर चढ़ जहाँ इच्छा आवे तहाँ जा अपनी रुचि से आनंद विहार किया करते हैं। और जो निर्दयी, पापी, कुटिल, कठोर, क्रूर, विशाल, वेद पुराण शास्त्र व देव पितरों की निंदा करते हैं, वे गुरु को न मानते, झूठ ही बोलते रहते हैं, ऐसे जितने अधम लोग हैं सो तो महा भयावन दक्षिण द्वार से जाते हैं, और दुःख भोगने के लिये धर्म्मराज की आज्ञा से तुरंत कोली काली बड़ी बड़ी देह पाय यमदूतों के हाथ पड़ मुगरों के मार से भुरकुस होते, अति अंधकार

महा महा रौरव नाम नरक में डाले जाते हैं, कि जिसमें जहाँ देखो तहाँ कीड़े कलबलाते हैं, और एक एक बाघ, सिंह, हुंडार, कुत्ते, बीच्छू, साँप, गिद्ध, कौए से भरे हैं कि पापियों को देखते ही सैकड़न आ झुक पड़ते हैं वो झट पकड़कर आपस में ऐंचा खैंची किया करते रहते हैं, तिनमें दारुण दुःखदायक बिच्छू डंक मारने लगते हैं, बारबार विषधर डसने को फुफकार करते, लोहे समान चोंचों से गिध कौए तिस पर ऐसे लगते हैं सताने कि जिस दुख का कुछ पारावार नहीं है। हाय! हाय! मरे रे, दौड़ो रे सदा पुकारते रहते हैं, पर विना धर्म के कोई उनको बचाना चाहे तो नहीं बचा सकता है।

इस प्रकार से यमपुरी का दक्षिण द्वार अति डेरावन है कि जहाँ से दूतों के बस होकर पापी लोग ऐसे महा नरक में पड़ते वो नाना भाँति के दुख को सहते है।

इससे अधिक कुंभीपाक आदि सहस्रन नरक एक से एक मैंने देखे कि जिनमें बड़े बड़े कीट भरे वो हाहाकार शब्द दूर ही से सुनाता है और वो महादुखदायक असिपत्र एक एक ऐसा बन है कि जहाँ खड्ग की धार के समान चोखे गाछों के पत्ते हैं, नीचे तिसके अति दुर्गंध कीड़ों से आकुल पीप की नदी बहती है, वो अधर्मी के तलने के लिये बीच में कहीं कड़ाहों में तेल गरगराता रहता है। बहुतेरे तो पहाड़ पर से गिराए वो शूली पर चढ़ाए जाते हैं।

यह समाचार वैशंपायन राजा जन्मेजय से कहते हैं।

इस प्रकार से नासिकेत मुनि यम की पुरी सहित नरक का वर्णन कर, फिर जौन जौन कर्म्म किए से वह भोग होता है सो सब ऋषियों को सुनाने लगे, कि गौ, ब्राह्मण, माता, पिता, मित्र, बालक, स्त्री, स्वामी, वृद्ध, गुरु, इनका जो वध करते हैं वो झूठ साक्षी भरने, झूठ ही कर्म्म में दिन-रात लगे रहते हैं, अपनी भार्य्या

को त्याग दूसरे की स्त्री को व्याहते, औरों की पीड़ा देख प्रसन्न होते हैं और जो धर्म्म से हीन पाप ही में गड़े रहते, वो माता-पिता की हित बात को नहीं सुनते, सबसे बैर करते हैं, ऐसे जो पापी जन हैं सो सब महा डेरावना दक्षिण द्वार से जा नरकों में पड़ते हैं।

इतनी कथा सुना फिर नासिकेत मुनि कहने लगे, कि यम की आज्ञा से दूत सब एक किसी को इहाँ से ले गए वो विसे उनके आगे खड़ा कर दिया, उसका जो पुण्य पाप का विचार होते मैंने देखा है सो अब कहता हूँ तुम सावधान हो सुनो।

यमराज की सभा में अपने अपने स्थान पर सुंदर आसन बिछाए बैठे अत्रि, गौतम, मैत्रेय, बृहस्पति, शुक्र, वेदव्यास, जह्न, कर्ण, भारद्वाज, दधीचि, गोभिल, दुर्वासा, मरीच, भृगु, गालव, सनत्कुमार, पुलह, पुलस्त्य, ऋतु, याज्ञवल्क, विश्वामित्र, मार्त्तंड, हरिमित्र व सुमित्र ये सब ऋषि लोग अच्छा अच्छा वस्त्र व भूषण पहिरे द्वादश आदित्य समान शोभते, नाना शास्त्र विचार विचार प्राणियों के धर्म्म अधर्म्म का न्याय किया करते हैं। तिनके बीच में कानों में कुंडल, शिर में सुंदर मुकुट पहिरे तारन्ह में चंद्रमा समान महातेजस्वी धर्म्मराज सदा विराजते रहते हैं।

तहाँ अति निर्दयी निपट डेरावना वैसे ही हाथ में दंड लिए दूतों ने उससे पूछा कि जिसको यहाँ से ले जा यम के पास खड़ा कर दिया था, कि कैसा पाप तुमने किया है सो धर्म्मराज के आगे सत्य बताओ।

इतने में बीच सभा में बैठे हुए प्रकट उचित कहनिहार ऋषि लोग शास्त्र विचार के बोल उठे कि महाराज! इस पापी ने तो ब्राह्मण वध किया है, कुंभीपाक में कि जहाँ का दुख सहा नहीं जाता, अपने कर्म्म का जैसा कुछ फल है सो बहुत दिन तक भोगेगा।

यह सुनते ही वो यम की आज्ञा पाय किंकरों ने झट उसे पकड़ लिया वो लाठियों से मारते-पीटते, घसीटते वहाँ ले चले और वोही नरक में, जहाँ कोई किसी को क्षण भर भी पीड़ा से बचा नहीं सकता है, डाल दिया वो तुरंत सहस्रन कीड़े बड़े-बड़े मोटे मोटे देह में लिपट गए वो माँस काट काट खाने लगे।

नासिकेत ऋषियों से कहते हैं इसी भाँति गोहत्या का भी निर्णय होते मैंने देखा है, और जो अपराधी विश्वासघात, गर्भपात करते, काम के बस हो जिस स्त्री के पास जाने को मना है उसीसे जा भोग करते हैं, मारे लालच के नहीं खाने को, सो हैं खाते, ऐसे जितने अधम लोग हैं सो तो कड़ाहों में कि जिनमें तेल गरम हो रहा है, डाले वो शूलो पर चढ़ाए जाते हैं। इस प्रकार बहुतेरन्ह शीकरों (सिक्कड़ों) से बाँध बाँध दूत सब यम के निकट पहुँचावते हैं कि जहाँ तेज में सूर्य्य समान चित्रगुप्त प्राणियों के पुण्य पाप का लिख ले जा समझते है, ऋषि लोग शास्त्र विचार जैसा जिसको उचित है वैसा न्याव बतावते हैं, ऐसी धर्म्मराज की सभा और वहाँ का सब वृत्तांत है और जिस जिस कर्म्म से हम नरकों मे पड़ते हैं सो भी सुनो मैं कहता हूँ।

जो नर चोरी आदि नाना भाँति के कुकर्म्म में आप तो दिन रात लगे हैं, तिसपर भी औरों को देखते हैं, वो एक अक्षर भी जिससे पढ़ते तिसे गुरु के बराबर नहीं मानते हैं, सो तब तक महानरक को देखते हैं कि जब तक यह संसार बना रहता है और जो दुष्ट गुरु को वाद कर हराते व डाटते हैं, पिता, माता, गुरु से व्यर्थ वैर करते हैं, वे सब तिसी नरक में पड़ते हैं, कि जहाँ ब्राह्मण के वध करनेवाले जाते हैं। इसलिए माता पिता गुरु को कदहीं कोप न करावेंगे कि जिससे ऐसे संकट को भोगेंगे। और जो कास पीतल, तामा, लोहा चुराते हैं, कन्यादान समय में भाँजी मारते हैं,

मुनि-ब्रह्मचारियों की तपस्या में बाधा करते हैं और जो निर्दयी क्या घर में क्या बन में, क्या कहीं आग लगा सहस्रन जीव को जला देते हैं, सो सब असिपत्र बन में डाले व लाल अंगारों पर घसीटे जाते हैं, व हाहाकार शब्द किया करते हैं।

और जो बालक, वृद्ध, स्त्री, साधु, संत को छलते हैं, नहीं करने को सो करते, और जो मनुष्य अच्छे अच्छे,/मीठी मीठी वस्तु बना छिपकर अकेले ही आप चट करते, हैं, सो विस कूप में पड़ते हैं कि जो बिष्ठा वो कीड़ों से भरा हुआ है।

जो नर बहुत दिन तक भोग वा प्राण से भी अधिक मान किसू अपराध से पतिव्रता स्त्री को त्याग देते हैं सो सब भी असिपत्र बन नाम नरक में डाले जाते हैं वो नाना भाँति की पीड़ा को सहते हैं।

इससे अधिक और भी नरक मैंने देखे कि जहाँ महाडरावन आग लहर रही है। अपने कर्मों से पापी लोग बार बार जलाए जाते हैं, बहुतेरे शाकरों से बाँधे हुए मुगरों के मार से नीचे गिर विलाप कर बेड़ी सहित उठ भागते हैं, तिस पर निर्दयी यम के दूत सब तुरंत उसे पकड़ लोहे के घनों पर पटकते हैं, कितने एक को तो गलों में फांसी लगा, किसीको दोनों पाँव ही धर घसीटते वो डाँट-कर कहते हैं कि हा मूर्खो! बहुत सबसे बैर बिसाहे हो, क्यों अब रोते हो। अपना कमाया हुआ दुख भोगो और जो पर सों कुकर्म्म किया है तिनको अष्ट धातु की बड़ी प्रतिमा को, कि जो अग्नि मे लाल की हुई है, अकवार से पकड़ाते हैं वो कहते हैं कि जैसे ही तुमने पराए की भार्य्या से विहार किया है वैसे ही इससे भी हर्षित होके करो; तिनके कहने पर जो जो तो नहीं उठते तिनको मारे लाठिन से चूर कर नीचे गिराते हैं।

ऐसे ही गंजन होते कोटिन स्त्रियों को भी देखा जो दूसरे पुरुष से अपने धर्म्म को नाशती हैं, कितने तो पहार वो तार के वृक्षों पर

मे गिराए जाते हैं, जो पराए का जीव मारने में अपना जनम गँवाते हैं।

जो नर किसी को खाने पीने में बाधा करते हैं सो सब भी विसी नरक में रहते हैं कि जिसका दारुण दुःख सहा नहीं जाता है। और जो नारी स्वामी को निंदती वो नित्य कलह करती हैं सो वहाँ डाली जाती हैं कि जहाँ बड़े बड़े सीमर के अंगारे ऐसे लहर रहे हैं। पति के मरे पर औरों से मिलती हैं यम के दूत सब विस की जीभ को काट लेते वो अष्टधातु की प्रतिमा को पकड़ाते हैं।

और जो पतिव्रता स्त्री की निंदा करते है सो सब नरकों में फिर नाना पीड़ा ऐसे भोगते हैं कि किसी प्रकार से किसी को उससे बचाव होने का नहीं।

इस प्रकार बहुतेरे नरकों का वर्णन कर नासिकेत मुनि फिर लगे ऋषियों से कहने कि यम के पुर में और भी एक अद्भुत स्थान देख आया हूँ, जहाँ लहराती हुई आग का सरूप ऊचाई में चार व घेराव में बीस कोस महाडरावन वृक्ष है। लाखों पापी जन उसमें टाँगे हुए हाहाकार शब्द को हैं करते, तिस पर अति कठोर निर्दयी यमदूत सब वज्र समान शस्त्रों से बारबार मारते पीटते वो कहते है कि हा अधर्मियों! कदही नहीं तुमने हर्ष से किसी देवता पितर को तृप्त किए, न कोई तीर्थ में फिरे, न किसी अतिथि अभ्यागत को कुछ दिया, वो माता पिता ब्राह्मण गुरु संसार में देवता तुल्य गिने जाते हैं विनको भी तनिक आदर से न पूजा कि जिस चूक का ऐसा फल पाते हो।

इतना कह धर्म्मराज के दूत सब महादुखदायक नरकों मे पातकियों को फिराते हैं। तिनमें किसी को देखो तो भैंसे पर कोई गीध कोई सारसों पर, कितने तो बाँदरों पर, बहुतेरे स्यारों पर चढ़े हुए निपट काले महाकुरूप कि जिनका बाघ सिंह कुत्ता बिलाई का ऐसा तो मुँह, वो लाल लाल आँख, खड्ग, त्रिशूल, परसा, बरछी.

लाठी, मुशल आदि बड़े शस्त्रों को हाथन में लिये यम की आज्ञा पाय नाना संकट में प्राणियों को डालते हैं। यह तो अपनी आँखों से पापियों की दुर्गति होते मैंने देखी है।

और जहाँ मनभावते नाना प्रकार के पकवान दही, दूध, घी, मिठाई वो रतन जड़ाव एक से एक अद्भुत भूषण वो भाँति भाँति के पटंबर वस्त्रों को कूट सदा लगो रहती है, वो कानन में कुंडल, गले में मोतिन की माला पहिरे, अति सुंदर सुंदर अप्सरा सब बीना आदि बाजा हाथों में लिए नाचती गावती बजाती रहती हैं, तिस स्थान में वो तिनके संग में अच्छे पुण्य के प्रताप से उत्तम उत्तम भोग बिलास करने को वे धर्म्मात्मा लोग जाते हैं वो विमानों पर चढ़े फिरते हैं और यमराज की दया से बहुत दिन तक महा महा सुख हैं करते कि जो संसार में देवता, ब्राह्मण, गुरु इनको मन लगा भक्ति से पूजते हैं; वो जो भूमि, सोना, गो, वस्त्र देते हैं, अतिथि अभ्यागत को आसन दे बैठाय अच्छा सुंदर मधु वचन बोल, कंदमूल से भी संतुष्ट करते हैं; और जो लोग ऋतु समय अपनी स्त्री के पास जाते, वो नित्य धर्म्म पुण्य करते, ऐसे जितने नर हैं सो सब तो कभी न यम का मुह देखते हैं।

और जो मनोहर घर बना सोना विधि से ब्राह्मण को देते हैं सो सब तो ऐसे स्थान पावते हैं जहाँ सोनेंह के मंदिर अनेक आश्चर्य्य आश्चर्य्य भोग कि जिनका कुछ बखान न किया जाता है। और जो मनुष्य भूखे लोग को एक ग्रास भी अन्न देते और सब प्राणियों में दया करते, शरण में आए को पालते हैं, सो सुरपुर में अप्सरों के साथ जा विहार करते हैं। वो उपजे हुए अन्नों से भरा पुरा खेत अपनी श्रद्धा से जो हैं संकल्पते सो तो परम स्थान में विमानों पर कि जो जहाँ मन होय तहाँ ले जाता है, चढ़े फिरते नाना आनंद किया करते हैं।

चौपाई

मोती मूगा रतन हैं देते। सो हैं मणिमय गृह में रहते॥
पनही छत्र वो शीतल पानी। हरषि दान करते जो ज्ञानी॥
सो हैं इंद्रपुरी को जाते। महाभोग जहं वो हैं पाते॥
हाथी ऊँट अन्न के दानी। दयाधर्म्म वो शील के खानी॥
स्थान परम को वे हैं जाते। गण गंधर्व जहाँ हैं गाते॥
बडे तीर्थ में जो हैं मरते। सो भवसागर को हैं तरते॥

और नाना भूषण पहिराय वेद की विधि से कुलीन वर को जो कन्या देते हैं, सो तो सब सहित सारी पृथ्वी दान किए का फल पाय देवतों के निकट महासुंदर स्त्रियों से विलसते हैं कि जिनके रूप से कामदेव भी मोहित होते हैं; वो विना धर्म्म पुण्य के जिनके दिन हैं बीतते, सो लोहा की भाथी समान सांस तो लेते हैं पर तनिक भी जीवन का सुख न पाते हैं।

नासिकेत ऋषियों से कहते हैं कि धर्म्मराज से पालित और जो सुंदर स्थान मुझको देखने सुनने में आया है सो भी तुमको सुनाता हूँ कि जहाँ यम के निकट साधु दूत सब रहते हैं वो पूर्वद्वार से धर्म्मात्मा लोगों को अमरावती में पहुँचावते हैं। और आश्विन कार्त्तिक में अन्न, जाड़े में वस्त्र, वैशाख जेठ में अच्छा शीतल पानी, वसंत के समय में फूल फल जो नर हैं देते, सो सब बहुत दिन तक सूर्यलोक में वास करते वो नाना सुख को भोगते हैं। जो तो दुर्भिक्ष में अन्न वो सुभिक्ष में सोना हैं देते, सो तब तक स्वर्ग में बसते हैं कि जब तक चंद्रमा सूर्य्य दोनों विद्यमान हैं। इसलिये चतुर लोग सब प्रकार से दान धर्म्म में चित्त दिए रहते हैं कि जिससे महा आनंद को पावते हैं। और जल के दानी, विष्णु के भक्त, ब्राह्मणों के हैं जो पूजक, सो सब हंस चक्रवाकों से सुशोभित विमानों पर

और चित्र विचित्र घोड़े-हाथी, मोर वा सारसों पर चढ़ यमपुरी के पूर्व द्वार से होते अपने अपने पुण्य प्रताप से सुरपुर में जाते हैं।

वो धर्म्मात्मा लोगों के लिये यमराज से टिकाई हुई नख से शिख लों नाना रतन जड़ाव आभरण और गज मुक्ता आदि मणि से अलंकृत उन महासुंदरी देवकन्याओं से भोग विलास करते हैं कि जिनका चंद्रमा सा बदन, कांचन सी देह, तिनमें कितनी तो स्फटिक सी स्वच्छ, कोई सिंदूर का रंग, बहुतेरी अति मनोहर स्याम सरूप, सब मिल जुल नाचती गाती बजाती हुई स्वर्गी लोगों को जहाँ इच्छा आवे तहाँ सुभग विमानों पर चढ़ाए लिए फिरती हैं।

देखो यह दान पुण्य का प्रभाव कि जिससे नर सब ऐसी उत्तम गति को हैं पहुँचते और सोना दिए से सूर्य्य के लोक, वस्त्र दिए से चंद्रलोक में जाते हैं। अन्न के दान किए से तो मुक्ति मिलती है इसलिये सदा अन्न दान करना कि जिससे संसारसागर में के बार बार आवागमन के दुःख से छूटें, वो परम आनंद को पावें। नासिकेत मुनि ऋषियों से कहते हैं—महा महा अद्भुत अद्भुत नरक कि जिनके श्रवन से अंग सिहर आता है, वो वैसे ही बड़े बड़े बहुतेरे पापियों को देखा और उस पुण्यस्थान का मुझको दर्शन हुआ कि जहाँ धर्म्मात्मा लोग रहते हैं। वो निपट सुख देनेवाली पुष्पोदका नाम ऐसी नदी बहती है कि जिसमें सुवर्ण की बालू वो दूध सा स्वच्छ अमृत समान स्वाद जल वो शंख पद्म हैं। और अति सुभग फूलों से शोभित तीर तीर में घने से कल्पद्रुम लगे हैं। शीतल सुगंध सदा मंद मंद समीर डोलता, हंस मोर कोकिल कपोत आदि पक्षी सोहावना शब्द करते, मत्त हो मधुकर सब गुंजते हैं। और जहां देखो तहाँ देवकन्या सब गाती, गण, गंधर्व, सिद्ध, चारण नित्य आय आय विहार करते हैं। तिस नदी के तट में एक से एक लाल पीत नील श्वेत हरित आश्चर्य्य आश्चर्य्य सुंदर सुंदर दीप्तिमान रत्नों

को ऐसी खानि मैंने देखी कि जिसकी शोभा का कुछ वर्णन न किया जा सकता है।

उस मनोहर स्थान में वे नर जाते वो सुवर्ण की बालू के बीच में खेलते वो युवती स्त्रियों के साथ नाना जल-विहार हैं करते कि जो भक्ति-भाव से देवता को पूजते वो तीर्थों में नहाते हैं।

और उस नदी के तट में चंद्र-सूर्य्य समान बहुतेरे मणि वो मोती-मूंगे, हीरों से रचित सोनन्ह के सहस्रन मंदिर मैंने देखे कि जहाँ पुण्यवान लोगों को अति सुख देने को रतन जड़ाव भूषण वस्त्र पहिरे सोरह सोरह वर्ष की अप्सरों को यमराज ने टिकाया है कि जिनकी कमल सी सुंदर बड़ी बड़ी आँख वो चंद्रमा सा बदन है।

नासिकेत कहते हैं; कि जो देवता गुरु ब्राह्मण को मानते, धर्म्म शास्त्र को विचारते, सकल प्राणियों में दया करते वो सब की भलाई में दिन रात लगे रहते हैं, तिनके विलास के लिए धर्म्मराज की पुरी में पुष्पोदका नाम नदी को भगवान ने बनाया है जो तीनों लोक में प्रसिद्ध है। न तो वहाँ किसी को कुछ भूख प्यास कदही लगती, न कोई शोक-संताप होता है, न भय, न दुःख, न किसी बात की कुछ चिंता और नित्य नया नया आनंद विहार करते हैं। सब कोई विनसे मीठी बात बोलते हैं।

जो पापी नित उठ सबसे कलह करते वो पराए को दुःख देते, सो तो परलोक में जा महा महा कष्ट भोगते वो बार बार हैं पछ-ताते। तहाँ यमराज के दूत कहते हैं कि हा! मूर्खों! तुमने मनुष्य को दुर्लभ देह पाय कदही न हरि की चर्चा की, वो सारे जन्म पाप ही में लगे रहे, कि जिसके करने में क्षण भर का तो सुख, पर कोटिन्ह बरस का नरक बास होता है। अब रोने कलपने से कहो क्या होगा जब समय गया है बीत, और कहा भी है—

दोहा

आछे दिन पाछे गए, कियो न हरि से नेह।
अब पछताए क्या भए, छूट गया जब देह॥

यह तो दूतों का बतकही है। और जिस जिस के लाने को धर्म्मराज विनको बरजते हैं सो हम तुमसे कहते हैं—कि जिनके गलों में तुलसी की माला, सुंदर तिलक, प्रेम से शालिग्राम को पूजते, सदा राम नाम जपते, पर स्त्री को माता सी हैं समझते, वो एकांत स्थान में पड़ा पराए के धन को देख मिट्टी सा त्यागते, वो सत्य ही बोलते, सबसे नय चलते, धर्म्म पुण्य में चित्त देते, तीर्थों को करते, क्रोध लोभ आहार को जीतते, वेद पुराण शास्त्रों को मानते, न दुःख से अकुलाते, न संपति पाय बौराते, ऐसे जितने उत्तम जन सो सब ईश्वर के हैं भक्त, दूर ही प्रणाम कर छोड़ देना।

इस भाँति सदा यमराज अपने दूतों को सिखलाते पढ़ाते रहते है। सो भी मैं तुमसे कह चुका।

अब नाप में तीन लाख चौआलिस सहस्र कोस का वह पथ है कि जिससे धर्म्मराज के लोक में लोग हैं जाते, और उस मार्ग में जो जो अद्भुत मुझको देखने में आया है सो सब वर्णन कर सुनाता हूँ। पहिले तो विस बाट में कुछ दूर तक जहाँ देखो तहाँ महादुखदायक आग लग रही और कहीं तो अति अंधकार हो रहा है, और कोई ठाँव बड़े बड़े चोखे चोखे काँटों से छाए हुए ऐसे पर्व्वत मिलते हैं कि जिनपर चढ़ने से दारुण पीड़ा होती है। कहीं देखो तो लोहों की खूँटी व सुई सब गाड़ी हुई हैं तिसपर ऊपर सों अति अंधकार हो रहा है। थोड़ी दूर आगे उसके कितने एक कोस तक बालू है धीपता, वो बहुत स्थान में निपट पाला है परता, कि जिनके झेलने से महा एक आफत आन पहुँचती हैं, तहाँ कठिन कठोर क्रर निर्दयी यमदूत सब सीकरों से बाँध पापियों को लिए

फिराते वो लोहों की लाठी आदि नाना प्रकार के शस्त्रों से मार मार भुरकुस कर डालते हैं, वो बार बार करुणा करते सब रोते हैं, पर बिना धर्म्म कुछ त्राण नहीं पाते। नासिकेत मुनि ऋषियों से कहते हैं, उन अधर्म्मियों के लिए बना कि जो ब्राह्मण वो पशु पक्षी को बधते, गुरु स्वामी को निंदते, बालक, वृद्ध, स्त्री, अनाथ, पथिक, इनका धन हरते, वो महा पाप कर छिपाए रहते, विष दे ब्राह्मणों को मारते, वो व्यर्थ सगरे दिन हाहा भूत हो फिरे फिरते हैं, उस दारुण पथ में अंत पानी को तरसते वो नाना गंजन भोगते। और भी बहुतेरे पातकियों को मैंने देखा कि जिनको क्रुद्ध हो हो दूत सब बार बार डाँहते मारते धमकाते वो कहते है कि अब ही हुआ क्या, जो जो संकट आगे आवेंगे सो देखोगे। मनुष्य का उत्तम जन्म पाय तुमने तृण जल भी न किसी को दिया कि जो अति सुलभ वो सहज में है मिलता। क्या यमलोक के कठिन बाट को नहीं सुना था कि जहाँ पापियों को मरन योग आ लगता है।

कवित्त

नरक विनासी सुख के रासी हरि चरित्र नहिं गाए।
क्रोध लोभ को नीच संग कर कहो कौन फल पाए॥
त्यजि आचार महा मद माते हृदय चेत में ल्याए।
आतुर ह्वै नारिन के पीछे मानुष जनम गवाए॥

और न तो कदही तीर्थ व्रत किए, न कोई ग्रहण समय ये गौ, भूमि, सोना, रूपा आदि दान कुछ दिया। अब बिना पुण्य धर्म्म के निपट भयावन यह नरक समुद्र को क्योंकर पार होना चाहते हो। सो वैशंपायन मुनि राजा जनमेजय से कहते हैं—

इतनी कथा जब नासिकेत ने सुनाई तब तो ऋषियों ने पूछा कि महाराज, अति दुःखदायक यमलोक के पथ में किस प्रकार से जाना

पड़ता है वो कौन [कर्म करके] वहाँ से हैं छूटते, सो अब कृपाकर वर्णन करो कि जिससे हमारे मन का संदेह जाय, वो मगन हो तुम्हारे जस को जा गावें।

वे बोले, संसार सागर में जितने प्राणी हैं सो सब मृत्यु के वश हो स्त्री आदि कुल परिवार और अन्न धन लक्ष्मी इन समेत देह को त्याग प्रेत रूप हो बिना संग साथी के अकेले ही विस बाट से जाते हैं। तिनमें जो तो पुण्यात्मा लोग हैं सो अपने धर्म्म के बल से महा दारुण मार्ग को सहज में पार हो देवता का रूप पाय धर्मराज की पुरी में ऋषियों के साथ उत्तम उत्तम भोग हैं करते।

और जो तो हैं पातकी सोई हैं अटकते वो नाना दुःख को सहते; तिस पंथ में एक से एक महाभयावन बहुतेरे स्थान मैंने देखे; पर आठ तो निपट डरावन हैं कि जिनमें पहिले बड़े बड़े काँटों के वृक्ष से भरा हुआ चार सौ कोस का एक ऐसा है कि जहाँ दूर ही से अति हाहाकार शब्द सुनने में आता है, वो महा महा दुःख से पापीजन वहाँ से हैं निकलते। दूसरा आठ सहस्र कोस का तम बालुका कि बिना पनहीं दान के विसको पार होना कोई चाहे तो नहीं हो सकता है। तोस-चालीस सहस्र कोस तक जहाँ देखो तहाँ निपट चोखे आरे सब उतान गड़े हुए हैं। तिस स्थान में शय्या के दानी सुख से हैं जाते वो पापियों का मरण योग आन लगता है।

विसमें बहुत दूर तक चारों ओर बड़ी आग लग रही है। तो बावली तलाव कूप हैं खनाते वो देवतों के मंदिर बनाते सोई विसको सहज में तर जाते हैं।

पांचवाँ एक सहस्र दस कोस का महा अंधकार वन है कि जिसको कालरात्रि लोग कहते हैं, दीपदानियों को पार होता है सहज में।

छठवाँ वैसे ही कई एक कोसों कोस तक अति अंधकार महानिशा

नाम स्थान है कि जहाँ बड़े बड़े बाघ, सिंह, हुंडार, कुत्ते, बीछू, सांप वो कंकड़ पाथर से भरे हैं, तिसपर काली घटा सदा छाई ही रहती है; तिस स्थान को पुण्यात्मा लोग क्षण में पार हो जाते हैं कि जो विधि से प्रेतों को अन्न व विप्रों को हाथी, घोड़े, गौ, दान देते वो तीर्थों में देवता-पितर को संतुष्ट करते हैं।

सातवाँ निपट गंभीर जल से भरा हुआ बत्तीस सहस्र कोश का कि जिसको भूमि के दानी सब सुख से तर जाते हैं।

आठवाँ वास सहस्र कोश तक महा भयावन रौद्र हो रहा कि जहाँ नाना प्रकार के दान से धर्म्मिष्ठ लोग सहज में निकल जाते वो पापी सब हैं अटकते।

नासिकेत ऋषिओं से कहते हैं—इस इस भाँति से प्राणी सब मर मर के यहाँ से तीन लाख चौआलिस सहस्र के अंत में जब जा पहुँचते तब यमराज के द्वार पर पीप लोहू से भरी, वो साँप कीड़ों से आकुल पापी जन को महा भयावनी चार सौ कोश की वैतरणी नाम नदी आ मिलती है। जो नर काली गौ व अन्न हैं देते, गंगा-सागर संगम आदि तीर्थों में नहाते, सज्जनों से संग करते, सदा दान-धर्म्म में लगे रहते हैं सो तो क्षण में गौ की पूछ पकड़ इसको पार हो निर्मल शरीर पाय सुंदर रथ पर चढ़ परम पद को पहुँचते हैं।

इस भाँति से पुण्यात्मा लोग सुख से वो पापी सब नाना गंजन से जाते हैं। तैसे ही यम के दूत कि जो प्राणी जिस जोग हैं तिसको तिसी प्रकार से धर्म्मराज के लोक में ले जाते हैं। और जो देखा सुना है सो मैं अब कहता हूँ।

सोना, रुपया औ पटंबर, वस्त्र, दूध, घी, अन्न, जल जो इहाँ हैं देते सो सब वहाँ पावते हैं। इसलिए सदा धर्म करना जिससे संसार में जस व परलोक में सुख होय। और विमानों पर चढ़ धर्म्मिष्ठ

लोग वह सुंदर पथ से यमपथ से यमपुर में सिधारते हैं कि जहाँ अति निर्मल जल से भरे हुए अनेक बावली, तलाव, वो नाना भाँति के फूले फले वृक्ष, खाने पीने को एक से एक वस्तु मिलती हैं। नासिकेत ऋषियों से कहते हैं, और जो अद्भुत मैंने देखा सो सुनो।

यम को सभा में कि जहां मुनियों के बीच में धर्मराज तारन्ह में चंद्रमा समान शोभते हैं, हमारे रहते ही महा तेजस्वी नारद मुनि आन पहुँचे। दूर से देखते ही वे उठ खड़े भए वो प्रणाम कर सुंदर आसन दे बैठाय हाथ पाँव धोला कुशल क्षेम पूछ कहने लगे "महाराज! आज हम निपट कृतार्थ हुए! और आपके आगमन से जाना कि ईश्वर मुझसे बहुत संतुष्ट हैं।"

यम की इतनी बातें सुनि क्षण एक चुप होकर बोले "धर्म्म अधर्म्म विचारने को आप भगवान ने तुम को यहाँ रक्खा है। वो तीनों लोक में जितने दैत्य राक्षस मनुष्य देवता हैं सो सब तुम्हारे वश में हैं। देखने को मैं आया हूँ कि किस प्रकार से प्राणियों के पुण्य-पाप को विचारते हो सो हमको सुनावो।

नासिकेत कहते हैं कि इतने ही में भाँति भाँति के बाजन समेत, अति मनोहर सहस्रन विमान, कि जिनके साथ उत्तम उत्तम वस्त्र भूषण पहिरे, वो हाथन में छत्र चामर वीणा बेणु लिए, नाना प्रकार के गीत गाती हुई एक से एक सुंदरी अनेक अप्सरों और सबों के आगे ऐरावत पर चढ़े इंद्र वहाँ आन पहुँचे।

दूर ही से हाथी घोड़े रथ का बड़ा शब्द सुनि वो उनके दर्शन से जितने पातकी हैं सो सब नरक से छूट स्वर्ग में चले जाते हैं।

यह समाचार पाय ऋषियों के सहित झट यमराज चंपत हो गए। दूत सब भी मारे डर से जहाँ तहाँ उठ भागे। जब विमान आगे बढ़ गया तब ऋषियों को साथ लिए यम फिर अपनी सभा में जा बैठे।

बहुत चकित हो नारद मुनि पूछने लगे कि पराक्रम में तो देखते हैं विष्णु समान हो, और बड़े बड़े दैत्य दानव यक्ष राक्षस आगे खड़े हो हैं। निपट आश्चर्य मुझको लगा कि कौन-सा भय हुआ कि जिससे इतना शीघ्र तुम भागे।"

नारद का वचन सुनि यम ने उत्तर दिया, "महाराज! है तो यह निपट गोप्य पर मैं तुमसे कहूँगा।"

नारद मुनि वो धर्म्मराज की ऐसी बात-चीत होती ही है कि दूत सब सभा में आन पहुंच के हाथ जोर यम से कहने लगे, "धर्म्मावतार! अब कौन काम करने को हमें आज्ञा होती है सो कहिए।"

इतना वचन सुनि उनसे कहा कि "दया धर्म्म त्याग जो अधम जिस पाप में सदा गड़े रहते हैं तिनको वैसे ही दुःख दे संकट में जा डालो।"

प्रभु की आज्ञा पाय महा क्रुद्ध हो दूत सब खड्ग, बरछा, मुगरे, लाठी आदि नाना शस्त्रों से जो पातकी जिस जोग थे तिनको वैसे ही मारने पीटने लगे, वो घसीट घसीट अति दुःखदायक बाघ, सिंह, हुंडार, कुत्ते कि जिनके निपट डरावन दाँत हैं, वो बीछू कीड़ों से जहाँ देखो तहाँ भरी हुई वैतरणी में लगे डालने कि जहां पीब लोहू के महा भयावन भौंरे घूम रहे हैं।

इस प्रकार जो नर गौ, ब्राह्मण, माता, पिता, गुरु का वध वो विश्वासघात करैं, वो स्वामी मित्र से विरोध करते, जात पाँत से निकल अच्छा वेष बना झूठ ही ज्ञान भाषते फिरते वो पतिव्रता स्त्री को त्यागते, रूक्ष हो सबसे बोलते हैं, सो नर बहुत दिन तक वैतरणी में कि जहाँ क्षण भर भी कोई किसी की रक्षा करने नहीं सकता, डाले जाते हैं।

नासिकेत कहते हैं कि ऐसी आज्ञा कर यमराज जब सुचित भए तब नारद मुनि ने फिर उनसे पूछा कि किस कारण से तुम इहाँ से भाग गए सो मुझसे कहो।

धर्म्मराज बोले "आगे त्रेता युग में योग तप में मगन, सदा अश्वमेध यज्ञ करनेवाले, क्रोध लोभ इंद्रियों को जीते हुए, फुलवारी को माली सा प्रजा के पालनिहार ऐसा प्रतापी राजा जनक था कि जिसको आपसे आप अपना अपना गुण औषधी सब बताती थीं, उसके राज्य में अमृत समान स्वाद फल वृत्त फलते, बहुत दूध गो देती, ढेर दिन तक लोग जीते थे, वो कदहा किसी को कुछ रोग व्याधि चिंता नहीं होती, तिसको महा पतिव्रता व तपस्विनी सब गुण भरी सत्यवती नाम स्त्री कि जिसको इंद्र आदि देवता सब आगे से ल्याने को आए थे, अप्सरों के साथ विमान पर चढ़ अमरावती को गई है, उसी को देखकर हम यहाँ से भागे, क्योंकि जो इंद्रियों को जीतते हैं, वो गुरु गोविंद का भक्ति करते, अतिथि-अभ्यागत को पूजते, तिनको दंड देने के हम बली नहीं। और भी उनके तेज से डरते हैं। यही हमारे भागने का कारण है।

वैशंपायन मुनि राजा जनमेजय से कहते हैं कि चित्रगुप्त सहित यमलोक का वह समाचार नासिकेत जब कह चुके तब ऋषि लोग सुन के बहुत चकित भए, वो बारबार प्रणाम स्तुति कर उनसे विदा हो अपने अपने आश्रम पर जा परलोक में सुख पाने को और भी तप से अधिक जप पूजा ध्यान में लगे।

इति श्री नासिकेतोपाख्यानं समाप्तम्।

———